वनस्पति वाणी

वर्ष 6 | सितम्बर 1995 | अंक 6

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण
BOTANICAL SURVEY OF INDIA

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण

क्रेसा क्रेटिका (एदंली)

अकेन्थस इलिसिफोलियस (हरकुच काँटा)

वनस्पति वाणी

वर्ष 6 | सितम्बर 1995 | अंक 6

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण
BOTANICAL SURVEY OF INDIA

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण

© भारत सरकार

इस प्रकाशन का कोई अंश निदेशक, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के लिखित पूर्वानुमति के बिना पुनर्प्रवर्तित, रिट्रिवल पद्धति से भंडारण या इलेक्ट्रानिक, मेकैनिकल, फोटोकापी, रिकार्डिंग या अन्य किसी तरीके से ट्रांसमिट नहीं किया जा सकता है।

प्रकाशन तिथि 14 सितम्बर 1995

सम्पादक मण्डल

डा० प्रभात कुमार हाजरा : प्रधान सम्पादक
डा० दिनेश मोहन वर्मा : सदस्य
डा० रथीन कुमार चक्रवर्ती : सदस्य
डा० विश्वनाथ मुद्गल : सदस्य
श्री ए रामकृष्ण शास्त्री : सदस्य
डा० एस० एल० गुप्त : सदस्य

सम्पादन सहयोग

श्री नवीन चौधरी

वनस्पतिवाणी में प्रकाशित रचनाओं की मौलिकता, प्रामाणिकता तथा व्यक्त विचारों के लिए लेखक उत्तरदायी हैं।

मुखपृष्ठ का चित्र : पोडोफाइलम हेक्सेण्ड्रम (हिमालयन में एपल)

विषय क्रम

- *पेड़-पौधों की पहचान और नामकरण* — 1
  दिनेश मोहन वर्मा
- *दुर्लभ सीमित क्षेत्री एवं संकटग्रस्त पौधा फ्रेरिआ इंडिका* — — 4
  नेत्रपाल सिंह और ब गो कुलकर्णी
- *हमारी विलुप्त होती वनस्पतियाँ और इसके दुष्परिणाम* — — 5
  हर्ष चौधरी
- *सिक्किम हिमालय में आर्किडों का संरक्षण* — — 9
  विजयकृष्ण, ए पी भट्टाचार्य एवं एस एल गुप्त
- *पर्यावरण मित्र : मिट्टी का घड़ा* — — 11
  एस एल गुप्त
- *'निपा' — एक संकटग्रस्त ताड़* — — 13
  अरूप कुमार बनर्जी, अभयपद भट्टाचार्य, रथीन कुमार चक्रवर्ती
- *मानव क्यूं फ़र्ज़ भुला बैठा* — — 14
  भोलानाथ
- *पर्यावरण एवं विकास* — — 15
  एस एल गुप्त, पार्थ बसु, नवीन चौधरी
- *आढातोडा वसाका (अडूसा) एक उपयोगी औषधीय पौधा* — — 17
  सुखसागर
- *संवेदना हरण* — — 19
  नवीन चौधरी
- *खतलिंग — हिमलोक की एक झांकी* — — 20
  एस सी मजूमदार एवं पी सी विश्वकर्मा
- *मुहावरे : आज के सन्दर्भ में* — — 22
  भगवती प्रसाद उनियाल
- *गुजरात के सागर तट के कुछ उपयोगी पौधे* — — 23
  महेश कोठारी एवं मधुसूदन राव केलम
- *वनस्पति* — — 25
  ए कुजुर
- *'नीम' एक चमत्कारी पौधा* — — 26
  पी एस एन राव एवं ए शुक्ल
- *दुधवा राष्ट्रीय उद्यान — बारहसिंघों का घर* — — 29
  भगवती प्रसाद उनियाल एवं सुरेन्द्र सिंह

वन देवता

वनस्पति पवमान मध्वा समङ्ग्धिधारया।
सहस्रवल्शं हरितं भ्राजमानं हिरण्यम।।

(ऋग्वेद 9/5/10)

हे सोम देवता ! तुम अपने मधुमयी धारा से इस वनस्पति को सींच दो जो कि सहस्र शाखाओं से युक्त है और जो हरी भरी है व स्वर्ण से बनी हुई होने के कारण अत्यन्त प्रकाशमान है।

एको वृक्षो हि यो ग्रामे भवत् पर्णफलान्वितः।
चैत्यो भवति निर्ज्ञातिरर्चनीयः सुपूजितः।।

(आदि पर्व 38/25)

किसी गांव में जब ऐसा कोई वृक्ष दिखाई देता है जो पत्तों और फलों से खूब संपन्न हो तो इसीलिए वह पूजने योग्य हो जाता है। लोग उसे भली प्रकार पूजते हैं और वह उस क्षेत्र के लिए चैत्य हो जाता है।

पेड़-पौधों की पहचान और नामकरण

● **दिनेश मोहन वर्मा**
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, कलकत्ता

पौधों की पहचान के विषय में जानने के पहले यह समझना आवश्यक है कि इनका नामकरण कैसे होता है। सभी जानते हैं कि कुछ सामान्य पौधों के अलग-अलग भाषा में कई नाम हो सकते हैं या फिर एक ही नाम से कई मिलते जुलते पौधे भी जाने जाते हैं। इन नामों का अपनी-अपनी भाषा और क्षेत्र में एक विशेष महत्व है जिससे इन्कार नहीं किया जा सकता परन्तु वैज्ञानिक और अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि से इन नामों का कोई महत्व नहीं है। यहां पर हम पौधों के वैज्ञानिक नाम के विषय में ही लिखेंगे।

वनस्पति विज्ञान में किसी भी पौधे का नाम दो अलग-अलग नामों को जोड़ कर होता है जैसे कि *हेडीचियम वीनस्टम*। इसमें हेडीचियम जीनस का नाम होता है और वीनस्टम स्पीशीज (प्रजाति) का नाम। हेडीचियम जीनस में कई प्रजातियाँ हो सकती हैं जैसे कि *हेडीचियम कौरोनेरियम, हे० ग्रिफीथियेनम, हे० कौक्सीनियम*, हे० *ग्रैसिली* इत्यादि। ये नाम लैटिन भाषा में होने चाहिये या फिर किसी भी वस्तु, नाम, स्थान आदि से लिये जा सकते हैं परन्तु इनको लैटिन भाषा के अनुसार परिवर्तित करना पड़ता है। कभी-कभी इन प्रजातियों के अन्दर और भी वर्गीकरण किया जाता है जैसे कि उपजाति (सब स्पीशीज), प्रकार (वैराइटी) और फौर्मा। प्रायः एक प्रश्न उठता है कि वैज्ञानिक नामकरण में लैटिन भाषा का ही चुनाव क्यों और कैसे हुआ? इस विषय में ठीक से तो कुछ नहीं कहा जा सकता लेकिन ऐसा लगता है कि यूरोप के विभिन्न देशों के वनस्पतिज्ञ जब भाषा के विषय में तय करने बैठे होंगे तब सभी ने अपनी-अपनी भाषा के उपयोग पर जोर डाला होगा और समझौता लैटिन जैसी पुरानी और समृद्ध भाषा पर हुआ होगा जिससे कई यूरोपीय भाषाओं के विकास में मदद मिली थी। कुछ ऐसा ही समझ लीजिये जैसे कि आज भारत वर्ष में संस्कृत भाषा के चुनाव पर किसी को भी आपत्ति नहीं होगी।

वैज्ञानिक नामकरण का एक विशेष उद्देश्य यह है कि एक ही प्रकार के पौधों का एक ही नाम होना चाहिये। एक ही प्रकार के पौधे जिनको वनस्पति शास्त्र में प्रजाति कहते हैं वह क्या है इनको खुले मन और विचार से समझना पड़ता है। जीव विज्ञान की जिसने भी थोड़ी सी सूक्ष्मता से अध्ययन किया है वह कह सकता है कि कोई भी दो जीव या पौधे एक दम आकार-प्रकार में एक तरह के नहीं होते। पिता और पुत्र एकदम एक से नहीं होते पर दोनों ही मनुष्य नाम से जाने जाते हैं। इसी प्रकार नीम के दो पेड़ भी एकदम एक से नहीं होंगे। आपस में कहीं न कहीं थोड़ी बहुत भिन्नता अवश्य होती है परन्तु फिर भी इनको नीम के ही नाम से जाना जाता है। जीवित वस्तुओं का हम जब भी किसी स्तर पर वर्गीकरण करते हैं तब हमेशा इस आपसी भिन्नता को ध्यान में रखते हैं। प्रजाति क्या है इस की परिभाषा ठीक प्रकार से आज तक शायद कोई भी नहीं दे पाया। एक प्रजाति में एक ही प्रकार के पौधे होते हैं जिनके बीज भी उसी आकार-प्रकार के पौधे उत्पन्न करने की क्षमता रखते हैं। इनकी भिन्नता को किस वर्गीकरण

तक मान्यता दी जा सकती है इस बात को हम वस्तुतः वनस्पतिज्ञों के हाथ में छोड़ देते हैं।

वैज्ञानिक नामकरण के विषय में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विचार आदि होता रहता है और समय समय पर एक किताब "इन्टरनेशनल कोड ऑफ बोटानिकल नामेन क्लेचर" निकाली जाती है। इसमें वैज्ञानिक नामकरण के विषय में तमाम नियम और प्रस्ताव होते हैं। इस विषय पर यहाँ पर और चर्चा तो नहीं कर सकते परन्तु एक विषय पर ध्यान आकर्षित करना आवश्यक है। वह नियम यह है कि जब भी किसी नये पौधे को नया वैज्ञानिक नाम दिया जाये तब यह आवश्यक है कि उसका एक सुखाया हुआ प्रारूप किसी पादपालय में अवश्य रखना होगा। इस प्रारूप को 'टाइप स्पेसिमेन' के नाम से जाना जाता है। यह आशा की जाती है कि इसी प्रारूप को देखकर ही इसकी प्रजाति के बाकी पौधे पहचाने जायेंगे। यह हमेशा सम्भव नहीं है। प्रायः ऐसा होता है कि बड़े-बड़े पादपालयों में कुछ ऐसे प्रारूप मिल जाते हैं जिसमें प्रायः लिखा होता है कि इसका नामकरण टाइप स्पेसिमेन देखकर किया गया है। फिर इनको देखकर और दूसरे लोग भी अपने पौधों की पहचान करते हैं। इस क्रम में कहीं भी किसी से भी गलती हो सकती है और प्रायः यह गलती पादपालयों या किताबों (फ्लोरा) में पाई जाती है। फिर जब कोई और वनस्पतिज्ञ फिर से अध्ययन करता है तब उसके लिये यह आवश्यक है कि वह अपने आप टाइप स्पेसिमेन फिर से देखे। इसी कारण से यह 'टाइप स्पेसीमेन' अत्यन्त महत्पपूर्ण समझा जाता है। 'टाइप' का महत्व समझने के साथ ही साथ यह समझना भी आवश्यक है कि वह अपने आप में एक प्रजाति नहीं है वह केवल एक मान्य प्ररूप है जिसको देखकर उस प्रजाति के अन्य पौधे पहचाने जा सकें।

पौधों की पहचान अधिकतर लोग पादपालय में किसी से पूछ कर और उसका प्ररूप देखकर करते हैं जिसमें कोई हानि नहीं है। परन्तु इसमें गलती होने की भी संभावना है। अच्छा तो यही होगा कि पादपालय में पौधा पहचानने के बाद कम से कम एक बार उस क्षेत्र के किसी अच्छे 'फ्लोरा' को अवश्य देख लें। हो सकता है कि आप का पौधा कुछ कुछ मिलती हुई दूसरी प्रजाति का हो। कुछ पौधों की प्रजातियाँ कभी कभी सारे विश्व में फैली होती हैं और कुछ की केवल कुछ क्षेत्र में ही जैसे कि ठंडे, गर्म, सूखे या नम आदि स्थानों पर या फिर कुछ प्रजातियाँ तो केवल एक ही स्थान पर पाई जाती हैं। जो प्रजातियाँ ज्यादा दूर तक फैली होती हैं उनमें आपसी भिन्नता की अधिक आशंका होती है। ऐसे भी कई कारणवश यह आवश्यक हो जाता है कि प्रजाति की भिन्नता को समझने के लिए हमको दूर-दूर के पौधों का अध्ययन करना पड़ता है। जहाँ तक हो सके जीवित पौधों का अध्ययन अत्यन्त लाभदायक समझा ज़ाता है। इन जीवित पौधों, 'टाइप' और पादपालयों में रखे बाकी प्रारूपों के अध्ययन के बाद ही पौधों की प्रजाति के विषय में ठीक से समझा एवं लिखा जा सकता है। आज भी भारत में वनस्पतिशास्त्र की किताबें और पादपालय आदि में देखने से पता लगता है कि बीस से तीस प्रतिशत ऐसी प्रजातियाँ हैं जिनके केवल एक-दो पुराने प्रारूप ही आज तक एकत्रित किये गये हैं। इसका कारण यह हो सकता है कि ये प्रजातियाँ विलुप्त हो गईं हों या हम उनके उगने के स्थान पर आजकल नहीं जा पाये हैं या फिर यह प्रजातियाँ अलग प्रजाति की हैं ही नहीं। कुछ ऐसे भी पौधे हैं जिनकी जड़, पत्ती, फूल या फल के विषय में आजतक जानकारी नहीं है। समुचित सर्वेक्षण और सही पहचान तथा नामकरण के बाद ही हम ठीक से समझ सकते हैं कि हमारी क्या क्या प्रजातियाँ कहाँ कहाँ होती हैं, कुछ विलुप्त तो नहीं हो रही हैं या किनका इस्तेमाल दवा

खाने, कपड़े आदि में कितना हो रहा है और किन प्रजातियों की संरक्षण की आवश्यकता है।

एक साधारण मान्यता है कि शक करना अच्छी बात नहीं होती परन्तु पौधों की पहचान के समय जितना ही शक किया जाये उतना ही लाभदायक होता है। उदाहरण के रूप में आपको अपने कुछ स्वयं के अनुभव बता दें। यहाँ पर पौधों के नाम या वैज्ञानिकों के नाम नहीं दे रहे हैं। एक बार एक प्रारूप के ऊपर से देखने में प्रजाति 'अ ब' लग रही थी परन्तु किसी वैज्ञानिक ने उसके फूल के 'स्टिगमा' का एक चित्र बनाया और उस पर कुछ बाल दिखा कर यह लिखा कि यह प्रारूप इन बालों के कारण प्रजाति 'अ स' है जबकि उस क्षेत्र में या उसके आस पास यह प्रजाति 'अ स' कभी भी एकत्र नहीं की गई थी। यही एक थोड़ा सा शक का कारण बन गया। लेंस और माइक्रोस्कोप से देखा तब हम को भी बाल दिखाई दिये लेकिन फिर भी कुछ मन को शान्ति नहीं मिली और इस प्रारूप को बाद में देखने के लिए रख दिया। कुछ दिनों बाद फूल को खोलने के लिए जब पानी डाला तो पता लगा कि एक छोटा सा कीड़ा अपनी पतली-पतली बालों जैसी टांगे लेकर तैरकर ऊपर आ गया। ऐसे ही एक बार एक प्रारूप में जड़ से निकलते हुए कुछ फूल थे। तमाम अध्ययन के बाद इस जड़ से निकलते हुए फूल की प्रजाति की सही पहचान नहीं हो पा रही थी, सोचते सोचते कुछ शक उभरे और जब सूक्ष्मता से प्रारूप को देखा तो पता लगा कि प्रारूप को हरबेरियम शीट पर चिपकाते समय एक छोटी सी गलती हो गईथी जो फूल तने के ऊपर होने चाहिये थे उनको जड़के साथ चिपका दिया गया था। यह मालूम होते ही प्रजाति की पहचान की सारी दिक्कतें दूर हो गईं। एक बार और जब वनस्पति उद्यान में अंधेरा होते समय घूम रहे थे तब एक प्रजाति के पौधे देखे जिनके फूल वैसे तो पीले रंग के होते हैं परन्तु इस उद्यान में गहरे कत्थई-काले रंग के थे। शक हुआ कि शायद हम को कोई नई प्रजाति का पौधा मिल गया है। दूसरे दिन पता लगाया तब जान पड़ा कि यह पौधे दस-पन्द्रह किलो मीटर दूर के जंगलों से लाये गये थे। यह आवश्यक समझा कि उस जंगल में जा कर हम इसके और पौधे देखें। वहाँ जा कर बहुत सारे पौधे मिले जिनके फूल पीले भी थे या जिनके फूलों पर लाल कत्थई दाग थे या लगभग पूरी तरह से कत्थई-काले हो गये थे। यह देखने के बाद यह सुनिश्चित हो गया कि यह पौधे किसी नई प्रजाति के नहीं हैं बल्कि इनके फूलों का रंग किन्हीं अन्दरूनी कारणों से भिन्न-भिन्न थे। ऐसे कई उदाहरण वनस्पति शास्त्र में काम करने वालों को मिले होंगे। अतएव किसी भी पौधे के अध्ययन के समय एकाग्रता और धैर्य के साथ-साथ शक की भी अपनी महत्ता है।

"दुर्लभ, सीमित क्षेत्री एवं संकटग्रस्त पौधा फ्रेरिआ इंडिका"

● **नेत्र पाल सिंह और ब० गो० कुलकर्णी**
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पश्चिमी परिमण्डल
7-कोरेगाव रोड, पुणे - 411 050

अस्कलेपिआडेसी कुल का यह पौधा डा० डाल्जल द्वारा पहली बार फरवरी 1864 में वर्णित किया गया। यह पुणे के एक तालुका जुन्नर के नजदीक एक पहाड़ी में करीब 1000 मीटर ऊँचाई के खंडहर की दरारों में उगा हुआ मिला था। मक्कान ने भी यह पौधा जुन्नर ही के पास के शिवनेरी किले से दूसरी बार संग्रहित किया था। यहाँ बाद में यह मिलना बन्द हो गया। बाद में कुछ वैज्ञानिकों द्वारा इसे दूसरी जगह से संग्रहित किया। हाल ही में इसको प्रो० देसाई, फरगुसन कॉलेज, पुणे द्वारा शिवधर गुफा के पास और कुंभोजकर कुलकर्णी और निपुणगे, विज्ञान वर्धिनी पुणे द्वारा सतारा से एकत्रित किया गया है।

बहुवर्षीय·शाक कुल का यह पौधा पत्थरों के बीच की दरार में उगता है और मांसल वनस्पति का प्रकार है। इसकी शाखाएँ और तने हरे और चतुष्कोणीय होते हैं, जिनमें पानी जैसा रस होता है और जो बाद में रूपहली-धूसर हो जाती है। पत्ते हरे, चमकीले, दीर्घवत और दीर्घवृत्ताकार, विरुद्ध, चतुष्क होते हैं और 3-5 x 1.8-2.5 सें० मी०, सरस होते हैं। इनके पर्णवृन्त 5-7 सें० मी० लंबे होते हैं। फूल आकर्षक होते हैं व शाक और वृन्त के कक्ष में या अतिरिक्त कक्ष में एकल संख्या में आते हैं, जिनमें 5 मि० मी० लंबे पुष्पवृन्त और एक निपत्र होता है। दलपुंज सरस, चक्राकार, 2-2.3 से० मी० व्यास का होता है। रंग गाढ़ा नील-अरूण, पिंडक 5, त्रिकोणीय होते हैं। मध्य में पुंकेसर कटोरा-कृत और लहरदार होता है, दलपुंज के किनारे पर गाढ़े नील-अरूण रंग के लोम होते हैं, दलपुंज पर 5 पीले रंग के असमाकृतिक बिंदु होते हैं। कभी कभी यह अल्प बीज युक्त हरे, रेखाकार फलधारण भी करते हैं, जो फालिकल प्रकार के होते हैं और जिनका बाद में रंग बदलता है। इसके नये पौधे मुश्किल से पनपने के कारण ये सह सीमित क्षेत्री है और प्राकृतिक वास नष्ट होने व अधिक संग्रहित होने से संकटग्रस्त भी हो गया है।

यह पौधा 1962 से भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पश्चिमी परिमंडल के प्रायोगिक उद्यान में अच्छी तरह पनप रहा है और हर साल वर्षा के बाद फूल धारण करता है। कभी-कभी 1-2 पौधों पर फल भी दिखाई देते हैं। यह भारतीय वनस्पति उद्यान, हावड़ा तथा प्रायोगिक उद्यान, येरकाड में भी अच्छी तरह पनप रहा है। पहली बार कृत्रिम वास में इसमें फलधारणा पुणे के उद्यान में 1971 में हुई। इस पौधे के कोशिकाध्ययन से इसके गुणसूत्र 2एन= 44 दिखाई दिये इस पौधे को नष्ट होने से बचाने में भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण प्रयासरत है।

हमारी विलुप्त होती वनस्पतियाँ और इसके दुष्परिणाम

● **हर्ष चौधरी,**
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, ईटानगर

बात सुनने में विचित्र लगती है किन्तु कटु सत्य है कि मानव जाति की कहानी जंगल से शुरू हुई थी और जंगल से ही खत्म होगी। आदि काल से मानव ने जंगल काटने का जो क्रम शुरू किया था वो आज कहीं अधिक तीव्रता से जारी है। आदिम युग में मानव शरीर को गर्मी पहुँचाने या खाना पकाने के लिये पेड़ काट कर जलाता था किन्तु आज के मानव को रहने के लिये मकान, उठने बैठने के लिए फर्नीचर, कागज, जलाने के लिये लकड़ी इत्यादि की आवश्यकता बढ़ गई है। सम्पूर्ण विश्व में प्रतिवर्ष 16-20 हेक्टेयर वनों का विनाश मानव द्वारा अपने प्रयोग के लिये किया जा रहा है। वनों के इस विनाश में निरंतर चल रही विकास परियोजनाओं का भी एक बड़ा योगदान है जैसे नई सड़कें बनाना, रेलवे लाइनों का बिछाना, बाँध, कल कारखानों का निर्माण, और इन सबके ऊपर मनुष्य की अबाध गति से बढ़ती हुई जनसंख्या के लिये रहने व खाने की व्यवस्था करना। इस सबके अतिरिक्त मनुष्य ने अपने लालच व अहंकार के वश जंगली पशु पक्षियों तथा वनों का अंधाधुंध शिकार व विनाश इस हद तक किया है कि इनकी कई जातियाँ विलुप्त होने के कगार पर पहुँच गई हैं। इस परिप्रेक्ष्य में पूज्य बापू के अनमोल विचार अविस्मरणीय हैं कि "प्रकृति के भंडार सबकी अनिवार्य आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये पर्याप्त हैं किन्तु चंद लोगों के लालच को तृप्त करने के लिये बहुत थोड़े हैं"।

हमारा देश भारत प्राकृतिक सम्पदा में बहुत धनी व सम्पन्न है। हमारे देश में लगभग 47000 किस्मों की वनस्पतियाँ पाई जाती हैं और इनमें से लगभग 17000 किस्में फूलदार पेड़-पौधों (Angiosperm) की हैं। इन 17000 फूलदार पेड़ पौधों की जातियों में से 5000 या उससे कुछ अधिक किस्में ऐसी हैं जो इस देश की सीमा से परे कहीं भी नहीं पाई जाती, इसके विपरीत सैकड़ों जातियाँ ऐसी भी हैं जो कि सुदूर देशों में जैसे यूरोप, जापान, अमेरिका, अफ्रीका इत्यादि में बहुतायत से उगती हैं और अनेकों ऐसी हैं जो हमारे पड़ोसी देशों में भी प्रचुर मात्रा में मिलती हैं। वनस्पतिज्ञों के अध्ययन व खोजों के आधार पर सम्पूर्ण विश्व में अबतक लगभग 3 लाख जातियों के फूलदार पेड़-पौधे ज्ञात हुए हैं। इनमें से अनेकों जातियों का वितरण क्षेत्र कई कई महाद्वीपों में फैला हुआ है जबकि एक बड़ी संख्या ऐसी जातियों की भी है जिनका वितरण क्षेत्र सीमित है। किसी किसी वनस्पति के उगने का क्षेत्र इतना संकुचित होता है जैसे कि एक पर्वत या घाटी विशेष। इस प्रकार की जातियाँ जो एक स्थान या प्रदेश विशेष में ही मिलती है उन्हें सीमित क्षेत्रीय (Endemic species) कहा जाता है।

यह बहुमूल्य वनस्पतियाँ ही हमारी भूमि, जल तथा वायु की स्वच्छता को बनाये रखे हुए हैं जिनके बिना समस्त जीवधारियों का इस पृथ्वी पर एक पल जीना भी संभव नहीं था किन्तु मानव स्वयं अपने विनाश के साधन जुटा रहा है। इसकी निरंतर बढ़ती खाने, घरेलू सामानों व अन्य सुख सुविधाओं की वस्तुओं की माँग ने प्रकृति व

प्राकृतिक संसाधनों को व्यापक क्षति पहुँचाई है, बढ़ते शहरीकरण, औद्योगीकरण व रासायनिक खादों और कीटनाशकों के अत्यधिक उपयोग ने हमारी भूमि, जल और वायु को इतना प्रदूषित कर दिया है कि अनेक स्थानों पर ये मनुष्य के उपयोग के लिये हानिकारक समझे जाने लगे हैं।

वनस्पतियों के महत्व पर चर्चा करना एक अन्तहीन विषय ही कहा जायेगा। ऐसी कोई भी वनस्पति नहीं है जिसका कि कोई उपयोग न हो, हाँ ये बात और है कि हमें अबतक उनके उपयोग के बारे में पता नहीं चल सका हो। अंग्रेजी में कही गई ये पंक्तिययाँ इस तथ्य को कितनी खूबी से प्रस्तुत करती हैं

"God in His wisdom made the FLY,
and forgot to tell us why"

लगातार वनों के कटाव तथा पूर्वोत्तर क्षेत्र में की जाने वीली ''झूम खेती'' से सभी प्रकार की वनस्पतियों की संख्या में कमी तो हो ही रही है इसके अन्य दुष्परिणामों जैसे बाढ़, भूस्खलन जैसी विनाशक समस्याओं में भी बढ़ोत्तरी हो रही है। बाढ़ की विनाश लीला से जहाँ एक ओर जन सम्पत्ति की हानि होती है वहीं भूमि की ऊपरी सतह की मिट्टी बह जाने से वहाँ की उर्वरा शक्ति भी नष्ट हो जाती है। पहाड़ी स्थानों में भूस्खलन, संचार, यातायात व्यवस्था भंग करने के साथ ही नदियों बांधों में सिल्टेशन जैसी समस्याओं को जन्म देता है। पेड़-पौधे हमें न केवल भोजन, इंधन, औषधियाँ, कपड़ा, आवास के साधन उपलब्ध कराते हैं वरन हमारे जीवित रहने के लिए उससे कहीं आवश्यक स्वच्छ वातावरण, वायु प्रदान करते हैं। इस कारण पेड़-पौधे प्रकृति के फेफड़े (Lungs) कहे जाते हैं जो न केवल कार्बन-डाई-ऑक्साईड, ऑक्सीजन में परिवर्तित करते हैं बल्कि कल-कारखानों तथा भूमंडल पर मानव द्वारा की जा रही नाना प्रकार की गतिविधियों से उत्पन्न जहरीली गैसों तथा अन्य प्रदूषणकारी तत्वों को अपने में अवशोषित कर लेते है इसके अतिरिक्त ये वायुमंडल का तापक्रम भी नियंत्रित करते हैं।

जिस प्रकार से हिमालय की पर्वत श्रृंखलायें, घाटियाँ जो कश्मीर से अरूणाचल प्रदेश तक फैली हुई हैं अपने बहुमूल्य औषधियाँ, फलदार पेड़-पौधे, कीमती लकड़ी के वृक्षों, सुन्दर मनमोहर फूलों वाले पेड़ों जैसे आर्किड, रोहडोडेंड्रान, मैग्नोलिआ, हिडाईकियम, एस्टर, ऐनीमोन, प्राईम्युला आदि आदि के लिये प्रख्यात है उसकी प्रकार देश के अन्य भागों में भी अनेको उपयोगी पौधों की जातियाँ मिलती है जिनका उपयोग आदिकाल से होता चला आ रहा है। किन्त औद्योगिक एवं आर्थिक विकास के नाम पर नई-नई योजनाओं को पूरा करे में वनों और वनस्पतियों का विनाश हो रहा है और उनके वितरण क्षेत्र का दायरा भी सीमित होता जा रहा है कहीं कहीं वनों की ऐसी दुर्दशा देखने में आती है कि घास और कुछ छोटी छोटी झाड़ियों के अलावा एक भी बड़ा वृक्ष नहीं दिखाई देता। ऐसे वन विहीन स्थानों पर अनेकों विदेशी खरपतवार या Exotic weeds जैसे माइकेनिआ, एजिरेटम, क्रायसोसिफैलम, लैंटाना इत्यादि उगने लगते हैं जो दूसरे उग रहे या उगनेवाले देशी पेड़-पौधे को पनपने नहीं देते और वो स्थान जहाँ कभी घने वन थे एक बंजर जमीन में परिवर्तित हो जाता है।

हालांकि इस तथ्य को झुठलाया नहीं जा सकता कि एक समय उपरांत किसी भी जाति का लुप्त या Extinct होना विकास की एक प्रक्रिया है और प्रकृति का नियम भी जैसे कि भूतकाल में पाये जाने वाले दैत्यकार डायनोसोर अनेकों विचित्र प्रकार के पशु-पक्षी, वनस्पतियाँ जो कि तेजी से बदलती हुई पृथ्वी की जलवायु तथा स्थलाकृति के अनुरूप अपने आपको न ढाल सकने के कारण 'सरवाईवल ऑफ द फिटेस्ट'' की कहावत को चरितार्थ

करते हुए स्वयं ही कुछ समय पश्चात् इस भूमंडल से लुप्त हो गये लेकिन मानव जनित कारणों से समय के पूर्व ही किसी जीवन जन्तु की जाति का इस पृथ्वी से समाप्त हो जाना या उसके प्राकृतिक विनाश की गति में तीव्रता आना चिंतनीय है। इस अप्राकृतिक विनाश लीला की गति पिछले 100 सालों में अधिक तेज हो गई है जिसके कारण अनेकों जातियाँ अपने समय से पहले विलुप्त होने को बाध्य हो गई। हम अपने निहित स्वार्थ में ये भी भूल गये कि किस जाति से कोई उपयोगी तत्त्व कब प्राप्त हो जायेगा, कौन सी जाति हमारी फसलों की उन्नत या उनमें लगे रोगों की रोकथाम में काम आयेगी कहा नहीं जा सकता। अनेकों प्रचलित जीवन रक्षक दवायें जो वनस्पतियों से बनाई जाती है अगर उनका उपयोग मनुष्य को मालूम होने से पहले ही वो इस धरा से विलुप्त हो जाती तो मानव जाति का क्या हुआ होता? ऐसा नहीं है कि जिन जातियों की उपयोगिता हमें मालूम है कि केवल उन्हीं को महत्व देते हुये उनका संरक्षण करना है वरन ऐसी जातियाँ जिनकी उपयोगिता अब तक अज्ञात है वो भी पर्यावरण तथा पारिस्थितिकी (Ecology) तथा खेती में प्रयुक्त होने वाली अनेकों किस्मों की पैदावार बढ़ाने तथा उनको (Disease resistant) रोग अवरोधी बनाने में नयी भूमिका निबाह सकती है। सुदूर अमेरिका में खरबूजों की फसल में बार-बार लगने वाली घातक मिल्डयू (Mildew) बीमारी को दूर करने में हमारे देश में पाये जाने वाली एक जंगली खरबूजे की किस्म से प्राप्त ''जीन'' से अमेरिकी खरबूजों की फसल को बचाया जा सका। उसी प्रकार दक्षिण-पूर्व एशिया में लगभग 30 लाख हेक्टेयर धान की फसल ग्रासीस्टंट वायरस (Grassy stunt virus) नामक बीमारी से नष्ट हो जाने के फलस्वरूप वहाँ अकाल जैसी स्थिति उत्पन्न हो गई थी। उस समय भी हमारे देश के उत्तर प्रदेश (U.P.) राज्य में पाये जाने वाली एक जंगली धान से प्राप्त ''जीन'' द्वारा ही इस बीमारी पर काबू पाया जा सका।

अनेकों वनस्पतियाँ अपनी उपयोगिता के परिणामस्वरूप आवश्यकता से अधिक दोहन से विलुप्त प्राय हो रही है। सैकड़ों औषधीय वनस्पतियाँ, फूलदार पौधे इस श्रेणी में आते हैं। कोप्तिस तीता (Coptis teeta), राइल्फिआ सरपेंटिना (Rauwolfia serpentina), पेनाक्स स्टूडोजिनसेंग (Penax pseudoginseng), बरबेरिस (Berberis), ससूरिया (Saussurea), जटामांसी (Jatamansi), एकोनिटम (Aconitum), पोडोफिल्लम (Podophyllum), टैक्सस वालीचिआना (Taxus wallichiana), एक्वैलौरिआ मलेक्केनसिक (Aquillaria malaccansis) आदि अनेकों ऐसी जातियाँ हैं जिनसे बहुमूल्य औषधियाँ बनाई जाती हैं। उनकी माँग न केवल भारत में वरन अंतर्राष्ट्रीय बाजारों में निरंतर बढ़ रही है। आकर्षक व मनमोहक फूलों वाले पेड़ पौधे भी इस विनाश लीला से अछूते नहीं है। भारत में आर्किड की लगभग 1300 किस्में पाई जाती हैं। ये मुख्यता वृक्षों के तनों व शाखाओं पर उगती हैं और बहुधा एक एक वृक्ष पर एक साथ अनेकों आर्किड, फर्न, मौंस व लाईकेन की जातियाँ उगती पाई जाती हैं। अरूणाचल प्रदेश में अक्सर एक एक वृक्ष पर 20-30 आर्किड की किस्में देखी जा सकती हैं। इस प्रकार के वनों के कटने पर होने वाले विनाश का आप स्वयं ही अन्दाजा लगा सकते हैं। इसके अतिरिक्त आकर्षक फूलों वाली आर्किड की किस्मों के दिनों दिन बढ़ते व्यापार और निर्यात के लिये इनको वनों से बड़ी मात्रा में एकत्र किया जा रहा है और इनमें से अनेकों जो कभी प्रचुर मात्रा में मिलती थी अब ढूंढ़ने से भी नहीं मिलती। अरूणाचल प्रदेश के सीमित क्षेत्र में पाया जाने वाला लेडीज स्लीपर आर्किड पैफियोपाडिलम फैरियानम (Paphiopedilum fairieanum) जिसको

''लास्ट आर्किड'' भी कहते हैं अब दुर्लभ हैं। इसी प्रकार रेडवाँडा (Red Vanda) व ब्लूवाँडा (Blue Vanda) अब प्रायः विलुप्त होने के कगार पर खड़े हैं। फैफियोपेडिलम वार्डी (Paphiopedilum wardii) नामक एक लेडीज स्लिपर आर्किड को जो अरूणाचल प्रदेश के लोहित जिले में खोजा गया था अब लुप्त या (Extinct) मान लिया गया है। डेन्ड्रोबियम (Dendrobium), सिम्बीडियम (Cymbidium), सेलोगाइन (Coelogyne), बल्बोफिलम (Bulbophyllum) इत्यादि की अनेकों जातियाँ अपने सुन्दर व आकर्षक फूलों की वजह से संकटग्रस्त (endangered) हैं।

यद्यपि लुप्त प्रायः तथा संकटग्रस्त पेड़-पौधों के उपयुक्त संरक्षण प्रयास प्रारम्भ करने में काफी देर हो चुकी है किन्तु फिर भी ऐसी बहुत सी जातियों को अब भी बचाया जा सकता है। इसके लिये सबसे पहले ऐसी जातियों की पहचान करनी होगी तथा उनको वनस्पति उद्यानों, संरक्षित वनों, जीन संक्चुरी, नेशनल पार्क, बायोस्फियर रिजर्व में उगाया जाना चाहिए। इस कार्य में विदेशों में सीड कल्चर तथा टिशू कल्चर काफी सहायक सिद्ध हुआ है। इन विधियों द्वारा अल्प समय में ऐसे पेड़-पौधों की संख्या तेजी से बढ़ाई जा सकती है और उनको पुनः वनों में स्थापित किया जा सकता है। ऐसा करने में ही समूची मानव जाति की भलाई है तथा हमारा मानवीय कर्तव्य भी, क्योंकि-

''जीव-जन्तुओं और पेड़-पौधों की लाखों जातियाँ जिनसे ये संसार सम्पन्न है अब केवल एक ही की दया पर निर्भर है वह है मनुष्य''।

यदायुष्यं चिरंदेवाः सप्तकल्पान्तजीविषु
ददुस्तैनायुषा युक्ता जीवेम शरदः शतम्
दीर्घानागा नगानद्योनन्ताः सप्तार्णवा दिशः
अनन्तेनायुषा तेन जीवेम शरदः शतम्
सत्यानि पञ्चभूतानि विनाशरहितानि च
अविनाश्यायुषा तद्वजीवेम शरदः शतम्

सिक्किम हिमालय में आर्किडों का संरक्षण

● विजयकृष्ण, ए० पी० भट्टाचार्य
एवं एस० एल० गुप्त
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, कलकत्ता

पूर्वी हिमालय में 27°5' और 28°10' उत्तरी अक्षांश और 88°4' एवं 88°58' पूर्वी देशान्तर रेखाओं के बीच स्थित सिक्किम राज्य (क्षे० फ० 7298 वर्ग कि० मी०) वनस्पतियों और जीव जंतुओं की समृद्धि और रोचकता के लिए प्रसिद्ध है। यहां 1500 मीटर तक की ऊँचाई पर शीतोष्ण सदाबहार, 4000 मी० तक समशीतोष्ण और 4900 मी० तक हिमाद्रि (अल्पाइन) प्रकार की वानस्पतिक विभिन्नता पाई जाती है। इसमें आर्किड जातियों के आकार-प्रकार, रंग-रूप की ऐसी अद्भुत विविधा और विलक्षणता शायद ही किसी अन्य पौधे में मिलती हो। इसीलिए भूविज्ञान के शब्दों में सिक्किम को सामान्यतया 'ग्रेट ड्रेनेज बेसिन ऑफ दि रिवर तिस्ता' कहा जाता है।

सिक्किम में आर्किड की 95 प्रजातियों की लगभग 425 जातियां पाई जाती हैं जिनका विवरण सूची 1 में दिया गया है। इनमें लुप्त प्राय आर्किड *पेफियोपेडिलम फेयरीएनम* एवं एकमात्र सम्पूर्ण मूल परजीवी *मलाक्सिस अफाका* भी सम्मिलित है। कुछ पूरे वर्ष पुष्पित होते हैं परन्तु अधिकतर फरवरी-अप्रेल एवं अक्तूबर-दिसम्बर के मध्य फूलते हैं। एक जाति *थ्रिक्सपरमम सेन्टीपेडा* में पुष्प प्रस्फुटन मात्र 12 घंटे की अवधि में ही होता है जबकि कुछ जातियां जैसे *सिम्बीडियम* अपने पुष्पित तनें एवं कलियों को जमीन पर गिरा देते हैं। इस क्रिया को 'क्लीस्टोगैमी' कहते हैं। *गैलेओला* जैसी बीजाणु उद्भिद जाति पुष्पित होने के पूर्व 3 मी० की पूर्ण ऊँचाई तक बढ़ता है। ज्ञातव्य है कि विश्व आर्किड संसार में प्रथम संकर (हाइब्रिड) इसी क्षेत्र के मूल भण्डार से सृजित हुआ था।

सूची 1 : भारत और सिक्किम में आर्किडों की सांख्यिकी भिन्नता

जेनेरा	भारत में कुल जातियाँ	केवल सिक्किम में प्राप्य
एकेन्थेफिपियम	3	2
एरीडेस	10	4
एरेक्निस	2	1
एरुडिंना	1	1
बल्वोफिलम	90	20
सिलोजाइन	39	12
सिम्बीडियम	21	9
डेनड्रोबियम	90	24
एडलोफिया	35	6
लिपेरिस	45	24
पैफिओपेडिलम	9	1
प्लिओनी	8	4
रिन्कोस्टलीस	1	1

आर्किड संरक्षण की स्थिति -

वर्तमान में अनेकों वानस्पतिक जातियां संकटापन्न स्थिति में है जिनके रक्षा हेतु अनेक संरक्षण प्रणालियां अपनाई गई हैं। इन्हीं में से एक सामान्य प्रणाली है- राष्ट्रीय उद्यानों, अभयारण्यों व पेटी जीवमण्डल संरक्षण (बी०

बी० सी०) की स्थापना। बी० बी० सी० नदी के दोनों तटों सहित वन संरक्षण प्रणाली को बताता है जहां आर्किड संरक्षण हेतु विभिन्न ऊंचाइयों में अभयारण्य की स्थापना की तत्काल जरूरत है क्योंकि यह स्थलीय और उपरिरोही दोनों प्रकार के आर्किडों के पुर्नरोपण में भी मदद करेगा। मार्च 1984 में अंतर्राष्ट्रीय आर्किड समिति को संरक्षण उपसमिति द्वारा पेश संबंधित नियमावली अनुमोदित रूप में इस प्रकार है-

1. व्यापारियो को आर्किड्स या अन्य पौधों की जाति को बढ़ाने के लिए पौधशाला (नर्सरी) लगाने में प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।
2. पौधशाला में बढ़ाई गई आर्किड्स की जातियों को सूची में दर्शाया जाय।
3. आर्किड्स बहुल क्षेत्र वाले पौधशालाओं में ऊतक संवर्धन तकनीक के जरिए बीजों से प्रसार हेतु प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।
4. जंगल से संग्रहित संकटापन्न पौधे के आयात करने की प्रवृति को रोकना चाहिए।

आई० यू० सी० एन० ने पौधों पर स्पीशिज सर्वाइल कमीशन के अन्तर्गत कुछ विशेषज्ञ समूहों को गठित किया जिसकी पहली बैठक (मार्च 1985) के दौरान निम्नलिखित उद्देश्य संस्तुत हुए - (क) संरक्षण (ख) आंकड़े संग्रहण (ग) अनुसंधान (घ) आर्किड्स संरक्षण की आवश्यकता के लिए जनसाधारण में जागृति पैदा करने और (ङ) संरक्षण नीतियों की उन्नति और विकास।

सिक्किम की विभिन्न ऊंचाइयों पर आर्किड्स के संरक्षण हेतु सिक्किम सरकार के वन विभाग ने दो आर्किड अभयारण्यों देवराली और सरमसा आर्किड अभयारण्य की स्थापना की है जहां बहुत से आर्किड संरक्षित है। किन्तु अभी भी जर्मप्लाज्म के लिए संवर्धन और प्रसार की अधिक आवश्यकता है। सौभाग्यवश आर्किड संरक्षण हेतु अनेकों उपाय- जैसे प्रदूषण नियंत्रण, प्राकृतिक अभ्यारण्य की स्थापना, व्यापार पर नियंत्रण हेतु राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय कानून बनाना इत्यादि, किए गए हैं।

पर्यावरण मित्र : मिट्टी का घड़ा

● एस० एल० गुप्त
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, कलकत्ता - 700 001

हिन्दी में कहावत है कि 'चिकने घड़े पर पानी नहीं ठहरता' यह कितना सत्य है यह तो नहीं मालूम परन्तु इतना सत्य अवश्य है कि भविष्य में आप कभी भी रोजमर्रा वस्तुओं की खरीदारी करते समय उस पर इस चिकने घड़े को प्रतीक चिह्न (लोगो) के रूप में पाए तो यह सुनिश्चित समझें कि वह वस्तु पर्यावरण प्रदूषक नहीं है। बढ़ते औद्योगीकरण के कारण फैलते प्रदूषण की रोकथाम के लिए अब यह आवश्यक हो गया है कि हम ऐसे चीजों का उपयोग करें जो पर्यावरण को फिर से प्रदूषित न करें और "मिट्टी की चीज मिट्टी में समा जाए" कहावत को चरितार्थ करें।

"इकोमार्क (Eco-Mark) यानी मिट्टी का घड़ा (Earthen Pot) का प्रतीक चिह्न के रूप में शुभारम्भ पर्यावरण एवं वन मंत्रालय द्वारा पर्यावरण प्रदूषण निवारण के दिन 2 दिसम्बर 1992 को किया गया। इसका आकार हमारी पृथ्वी को संकेतिक करता है (चित्र 1) एक और जहां इसका ठोसपन शक्ति का परिचायक है वहीं इसकी कोमलता क्षणभंगुरता (Fragilty) को इंगित करता है। दूसरे शब्दों में जिस तरह से इसको उचित ढंग से संभाल न सकने पर टूटने की आशंका रहती है उसी तरह से पर्यावरण का अनियमित दोहन करने से विनाश की संभावना होती है। इसके निर्माण में गैर-परम्परागत स्त्रोत पृथ्वी की मृदा का उपयोग होता है जिसमें पुनर्नवीनीकरण एवं स्वपुनर्जनन की क्षमता होती है। इसमें किसी खतरनाक वस्तु का निर्माण नहीं होता और निर्माण में उर्जा की उपयोगिता के साथ-साथ यह जैव अपकर्षीय भी है।

मनुष्य एक सामाजिक और प्राकृतिक प्राणी है और एक स्वच्छ प्राकृतिक वातावरण में रहने का उसे प्राकृतिक अधिकार है। परन्तु प्रकृति को प्रदूषित करने वाली वस्तुओं से कैसे बचाए रखे तथा पर्यावरण मित्र एवं पर्यावरण प्रदूषक वस्तुओं को पहचाने कैसे, इसी समाधान हेतु सरकार की ओर से इकोमार्क के प्रचलन का निर्णय लिया गया है। इस प्रतीक चिह्न की किसी उपभोक्ता वस्तु पर उपस्थित होना ही इस बात का परिचायक है कि यह वस्तु पर्यावरण को प्रदूषित नहीं करेगा। क्योंकि यह प्रतीक चिह्न केवल उन्हीं कम्पनियों, उत्पादकर्ताओं को प्रदान किया जाएगा जो विशेष पर्यावरण मानकों का पालन करें। पर्यावरण मित्र एवं अच्छी गुणवत्ता दोनों को एक साथ उपभोक्ता तक पहुँचाने के लिए "इकोमार्क" को आई० एस० आई० (I.S.I) मार्क के साथ ही दिया जाएगा और इस हेतु इसको भारतीय मानक संस्थान (ब्यूरो ऑफ इण्डियन स्टैंडर्ड) द्वारा दिया जायेगा।

डा० आर० के० सिंह, निदेशक (रसायन) भारतीय मानक संस्थान के अनुसार तरल डिटर्जेंट साबुन बनाने वाली एक कम्पनी शीघ्र ही अपने उत्पादों को "इकोमार्क" के साथ पेश करेगी। दूसरी ओर एक बहुराष्ट्रीय कम्पनी हिन्दुस्तान लीवर ने परितंत्र सुध्य (Ecofriendly) वस्तुओं के उत्पादों में रूचि दिखाई है। केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के अध्यक्ष श्री दिलीप

विश्वास ने अपने गत वर्ष कलकत्ता यात्रा के दौरान (8 मार्च 1994) ''इकोमार्क'' पर संगोष्ठी के दौरान बताया कि एक बार किसी फैक्टरी या कम्पनी को ''इकोमार्क'' लेबल दे देने मात्र से ही हमारी जिम्मेदारिया खत्म नहीं हो जाती बल्कि गुणवत्ता बनाए रखने हेतु इसकी समय-समय पर थोक एवं खुदरा विक्रेताओं के पास मौजूद नमूनों की जांच एवं निगरानी करने का भी प्रावधान है। इसके अलावा ''इकोमार्क'' पाने वाले छोटे उद्योगों को प्रोत्साहन भी देने का विचार है।

इस कार्यक्रम के अन्तर्गत अभी तक जिन उत्पादों का चुनाव किया गया है वे इस प्रकार से है :-

1. साबुन एवं डिटर्जेण्टस 2. प्लास्टिक 3. खाद्य उपयोग की वस्तुएं जैसे खाने का तेल, चाय, काफी, पेय पदार्थ, बच्चों के आहार एवं संसाधित खाद्य 4. कागज 5. कपड़े 6. खाद्य संयोजी एवं परिरक्षक (Food additives and Preservatives) 7. सौंदर्य प्रसाधन सामग्री (Cosmetics) 8. रंग (Paints) 9. बैटरियां 10. लुब्रिकेटिंग ऑयल 11. पैकिंग में काम आने वाले पदार्थ 12. एरोसॉल 13. विद्युत एवं इलेक्ट्रानिक वस्तुएं तथा 14. काष्ठ विकल्प (Wood Substitute)

विकास एवं वैज्ञानिक प्रगति के नाम पर मनुष्य स्वयं को प्रकृति से दूर करता जा रहा है। उम्मीद है ''इकोमार्क''- मिट्टी का घड़ा उसे प्रकृति को समझने के साथ-साथ उसके प्रदूषण रहित करने का प्रयत्न करेगा।

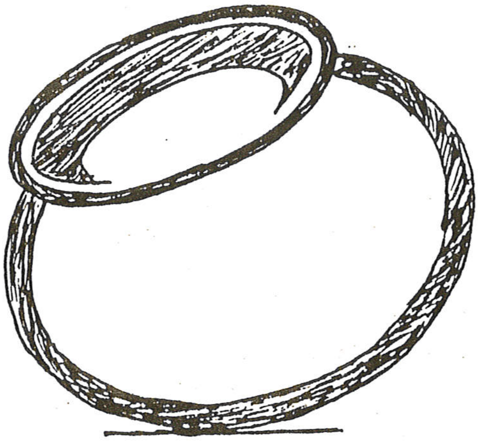

चित्र 1: 'इकोमार्क' का प्रतीक चिन्ह

'निपा'- एक संकटग्रस्त ताड़

● **अरूप कुमार बनर्जी, अभयपद भट्टाचार्य एवं रथीन कुमार चक्रवर्ती**
भारतीय वनस्पति उद्यान, हावड़ा-711 103

वनस्पति शास्त्र में *निपा फ्रूटिकैन्स* (Nypa fruticans Wurmb) के नाम से पहचाना जानेवाला यह पौधा श्रीलंका में 'पानी का नारियल' एवं पश्चिम बंगाल में 'गोलपत्ता' अथवा 'रावुआ' के नामों से जाना जाता है। यह श्रीलंका के सामुद्रिक तटों से लेकर भारत के गांगेय सुन्दरवन, बंगलादेश के चटगांव, बर्मा, जावा, सुमात्रा, फिलीपाईन्स, सूदूर अस्ट्रेलिया के तटों एवं दक्षिणी नाईजीरिया के कच्छ वानस्पतिक क्षेत्रों में पाये जाते हैं।

पश्चिम बंगाल के सुन्दरवन में लोगों की बढ़ती हुई संख्या, खेती के लिये वनों की कटाई एवं गोलपत्तों से घर की छावनी हेतु उपयोगों ने इसे संकटग्रस्त सीमा तक पहुंचा दिया है। अतः इसे बचाने के लिये आम जागरुकता बढ़ाने की आवश्यकता है। सुचारू ढंग से जनजागरण बढ़ाने हेतु केवल वनस्पतिज्ञों का ही नहीं बल्कि प्रत्येक नागरिक जैसे पत्रकार, समाजसेवी संस्थाओं, पर्यावरण क्लब इत्यादि का सहयोग भी जरूरी है। इस दिशा में कार्य करने के पहले 'निपा' का विवरण जानना आवश्यक है।

यह खाड़ियों में पाये जाने वाला भूशायी ताड़ जातीय पौधा है, जो झुण्ड में उगता है। ये ज्वार के समय सम्पूर्ण या आंशिकरूप से पानी में डूब जाते हैं एवं भाटा के समय पानी के बाहर निकल आते हैं। इसके काण्ड स्थूल 30-40 से० मी० एवं राइजोम 45.0 से० मी० तक मोटे होते हैं। पत्ते अतिखण्डित 5.0-9.0 मी० तक लम्बे एवं पत्रवृन्त 1.0 से 1.5 मी० तक होते हैं। पत्रक 1.2-1.5 मी० लम्बे, नुकीले, पृथुपर्ण अनेक एवं ढके हुए तथा मंजरी शाखायिन और 1.2-2.0 मी० तक लम्बे होते हैं। पौधा द्विलिंगी परन्तु नरपुष्प बहुत ही छोटा और स्त्रीपुष्प थोड़ा बड़ा एवं मंजरी के अन्त में गोलाकृत झुण्ड में होता है। पुष्पपुट 6 एवं बहुत छोटे होते हैं। परागकेसर एवं स्त्रीकेसर 3-3 संख्या में होते हैं। बीज काफी बड़ा 8.0-10.0 से० मी० तक होता है। इसका क्रोमोसोम संख्या 2n=16 है।

इसके पत्तों से सुन्दरवन के अलावा सुमात्रा एवं फिलीपाईन्स के लोग घर की छावनी बनाते हैं। सुमात्रा के लोग तो इसकी ताड़ी निकालकर शराब, विनेगर एवं चीनी भी बनाते हैं। बीजों का खोपरा कठोर होता है फिर भी फिलीपाईन्स के तटीय लोग इसे खाते हैं।

कलकत्ता राजभवन उद्यान के झील में इसके प्रवेशन की जानकारी प्राप्त नहीं है। वहां से इसके बीजों को 16 मई 1989 को भारतीय वनस्पति उद्यान में लगाया गया। अंकुरित होने के बाद पौधों का लगातार निरीक्षण किया गया। उद्यान के 'लेरम' झील के पास ज्वार के समय लवणांक्त पानी आ जाता है जो कि इसके मूलस्थल से थोड़ा बहुत मेल है। अतः इस जगह का चयन कर सन् 1991 में 'निपा' के नन्हे पौधों को लगाया गया जहाँ अब ये अच्छी तरह से उग रहे हैं एवं उम्मीद है कि कुछ ही वर्षों में यहाँ *निपा फ्रुटिकैन्स* का झुण्ड तैयार हो जायेगा। यह पौधा भविष्य में वनस्पति छात्रों को उत्साहित करेगा एवं साथ ही साथ भारतीय वनस्पति उद्यान की शान में भी बढ़ोत्तरी करेगा।

मानव क्यूं फ़र्ज़ भुला बैठा

● **भोलानाथ**
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, अंडमान निकोबार परिमंडल, पोर्टब्लेयर

मानव क्यूं फर्ज भुला बैठा, जब से ही तेरा अवतार हुआ।
अपने को विकसित करने का, सपना तो तेरा साकार हुआ।।
धरती के हर कोने में तूने, अपना अधिकार जमाया है।
जल, थल ही नहीं नभ में तू, अपना संसार बसाया है।
तेरे ही प्रायोगिक क्रियाओं से, ये वातावरण बेकार हुआ।
मानव तू फ़र्ज़. . . . . ।

जिन वृक्षों को पूजा तुमने, पुरखों के इष्ट देवों की तरह।
फल-फूलों को खाया जिनके, स्वादिष्ट लगे मेवों की तरह।।
उनका भी तुम्ही ने विनाश किया, तेरे ज्ञान का ज्यों विस्तार हुआ।
मानव तू फ़र्ज़. . . . . ।

नदियों की चंचलता छीनी, धरती की छीनी हरियाली।
वन जीवों की आजादी छीनी, धरती को खाली कर डाली।।
अपने ही बिछाए जालों में, बंधकर के खुद लाचार हुआ।
मानव तू फ़र्ज़. . . . . ।

नित नई नई खोजें करते, कुछ आगे बढ़ा और बढ़ता ही गया।
बुनियाद नहीं मजबूत किया, एक सीढ़ी मिली चढ़ता ही गया।।
पर धरती का आंचल भरने को नहीं कोई तैयार हुआ।
मानव तू फ़र्ज़. . . . . ।

सब कुछ खोया इस धरती ने, कुछ मिला न हेरा-फेरी से।
"जीओ और जीने दो" का मतलब समझ में आया देरी से।।
वृक्ष लगाओ, सब सुख पाओ, पुण्य सहित उपकार हुआ।
मानव तू फ़र्ज़. . . . . ।

पर्यावरण एवं विकास

● एस० एल० गुप्त, पार्थ बसु
एवं नवीन चौधरी
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, कलकत्ता

मानव सम्पूर्ण जीव जगत के शीर्ष पर है और अपनी संख्या निरन्तर बढ़ाए जा रहा है। इस धरती पर प्रत्येक सातवां आदमी भारतीय है। स्पष्ट है कि संसार की जनसंख्या का 16% और समस्त भूभाग के मात्र 2.4% पर भूमि सहित प्राकृतिक संसाधनों की स्पष्टतः बहुत मांग है। हालांकि एक औसत भारतीय विकसित जगत के एक व्यक्ति की तुलना में बहुत कम संसाधन का उपभोग करता है, फिर भी न केवल भारतीय बल्कि विकसित देशों का भी मानव प्रकृति के साथ दुर्व्यवहार कर रहा है और इसके उपभोग में अन्याय व निष्ठुरता से पेश आ रहा है। अपनी सुख सुविधा के सामने परितंत्र संतुलन का मानव के लिए कोई कीमत नहीं है।

भारत और अन्य विकासशील देशों को पारम्परिक और अनुकरणात्मक एवं अकल्पनाशील पथ पर ले जाने वाली कई ताकते हैं। भारत या विश्व के लिए यह पथ कल्याणकारी नहीं है। महात्मा गांधी ने 60 वर्ष पूर्व कहा था कि औद्योगीकरण में पश्चिम की नकल करने से भारत को भगवान बचाएं। एक छोटे से देश का आर्थिक साम्राज्यवाद आज संसार को बेड़ियों से जकड़ रहा है।

आज हमारे लिए अपने कार्य कलापों की समीक्षा करने का वक्त आ गया है। सभी देशों के लोग आज यह सोचने को विवश हैं कि धरती की प्राकृतिक सम्पदा कैसे बचाएं एवं सजीव सम्पदा की रक्षा कैसे हो। यह भी याद रखना है कि सजीव सम्पदा के अस्तित्व में अन्य प्राकृतिक सम्पदा की अहम भूमिका है। प्रकृति की रक्षा में हमारी तत्परता और बदले में प्रकृति से होने वाले लाभ का अनुपात लगातार बढ़ता रहे तो हमारी सभ्यता अपने उत्कर्ष के शिखर पर आसीन होने की दिशा में बढ़ेगी।

पर इसके विपरीत पर्यावरणीय समस्याएं आज हमें कदम-कदम पर उलझनों में डालती हैं। बड़ी तेजी से संसार यह महसूस कर रहा है कि भूमण्डल के तापमान की वृद्धि, ओजोन परत का संकट, अम्ल वर्षा, सागरीय प्रदूषण, जैवीय विविधता पर संकट जैसे पर्यावरणीय मामले राष्ट्रीय स्तर के नहीं अपितु विश्वव्यापी है। पर्यावणीय समस्याओं की जटिलता आज बढ़ जाने का आंशिक कारण परिवर्तनशील कृषि एवं पशुओं द्वारा अबाध चराई जो कल तक हानिकारक नहीं थे उनका हानिकारक हो जाना है। लेकिन जैसे पारम्परिक आचारों में सीखने की प्रक्रिया और कठिनाईयां थी वैसी ही बात नवप्रचारित तकनीकों की भी थी। बहुत से उपाय जिन्हें कभी समाधान मान लिया गया था वे आज कल्पनातीत कीमत वसूल कर रहे हैं। साठ के दशक में हरित क्रान्ति ने भारत की बढ़ती खाद्यान्न मांग को तो पूरा कर दिया परन्तु उस समय यह नहीं महसूस किया गया कि यह जहां एक ओर देश के प्राकृतिक संसाधन भण्डार पर असर डालेगा वहीं दूसरी ओर हमें रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशक दवाओं आदि पर निर्भर बना देगा। आज

सूक्ष्म पोषक तत्व एवं कार्बनिक तत्व के दोष से सम्बन्धित लवणयुक्त मृदा एवं मृदा संरचना की क्षति आदि के अलावा रासायनिक खादों पर बढ़ती निर्भरता आदि समस्याओं से हम परिचित हैं।

आज यह मान लिया गया है कि कोई बना बनाया समाधान नहीं हो सकता, तकनीकों से समाधान नहीं हो सकता। प्राचीन आचारों में जो सर्वोत्तम है उनमें आधुनिक विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का लाभ मिलाकर ही समस्या के समाधान का सार्थक प्रयास होगा। आज विज्ञान का ध्यान जैवीय विविधता पर केन्द्रित हो रहा है। प्रयोगशाला के बाहर एवं अंदर संरक्षण की दिशा में नित्य नये प्रयोग हो रहे हैं। यत्र-तत्र जीवमण्डल अभयारण्य की स्थापना हो रही है। विज्ञान हमें कुछ नई चीजें देता है जिनसे प्रकृति को असुविधा होती है। प्रकृति अत्यन्त क्षमाशील होते हुए आज विवशता में निष्ठुर होती जा रही है। सम्पूर्ण मानव जाति निष्ठा के साथ जैवीय विविधता के संरक्षण पर ध्यान दे तो प्रकृति फिर क्षमाशील होगी।

पश्चिम जब विकास कर रहा था तो अपने गतिविधियों के पर्यावरणीय संघट्टन के प्रति सचेत नहीं था। आज हम इस रास्ते के खतरों को अच्छी तरह जानते हैं। अन्य विकासशील देशों के साथ हमें किसी विकल्प तक पहुंचने के लिए उपलब्ध रास्तों का भी विकल्प खोजना है। हमारा यह लक्ष्य विकास का वास्तविक लक्ष्य होना चाहिए जो पर्यावरणीय दृष्टि से ठोस हो और जिसमें सामाजिक सन्तुलन हो। इस तरह के विकास से जनसंख्या वृद्धि की दर में कमी को महसूस किया जा सकता है। भारत में इस लक्ष्य तक पहुंचने के कई प्रयास हो रहे हैं। ये सारे प्रयास शायद सफल नहीं हो लेकिन वे उनका प्रतिनिधित्व करते हैं जिनकी निरन्तर समीक्षा हो रही है। वे उस चिन्तन के विस्तृत आधार और भारत में पर्यावरणीय प्रयासों के स्पन्दन के प्रतिनीधि है। इनमें भागीदार होकर उस विकल्प की तलाश करनी होगी जो सभी देशों के पर्यावरणीय और किसी सामाजिक क्षति के बिना विकास के सच्चे लक्ष्य की ओर ले चले।

आढ़ातोडा वसाका (अडूसा) एक उपयोगी औषधीय पौधा

● **सुख सागर,**
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण,
मध्य क्षेत्र, इलाहाबाद - 211 002

अडूसा भारत में प्रायः सभी जगह पाई जाने वाली वनस्पति है। यह परम उपयोगी औषधीय पौधा है। यह खाली जगहों, नदी, तालाबों, खंडहरों आदि स्थानों पर स्वयं ही उग आता है। इसे पशु नहीं खाते अतः इसे खेतों, बगीचों, बागों, एवं मकानों आदि के किनारे बाड के रूप में भी उगाया जाता है।

अडूसा के हरे-भरे पौधे कई शाखाओं में झाड़ी-नुमा होते हैं। इसका तना कठोर एवं मजबूत होता है। इसके जड़ के थोड़ा ऊपर से ही शाखाएं निकलती हैं इसकी पत्तियां 4 से 8 इंच तक लम्बी और $1^{1}/_{2}$ से 3 इंच तक चौड़ी होती हैं। पत्तियां आगे की ओर नुकीली होती हैं। इसके फूल शाखाओं के आगे गुच्छों में लगते हैं। इस पौधे में एक खास किस्म की गंध आती है। इसमें शरद ऋतु में श्वेत फूल निकलने लगते हैं। अडूसा का फल लगभग पौन इंच लम्बा और इसका अगला भाग मोटा तथा पिछला भाग चपटा होता है। इसमें चार बीज होते हैं।

अडूसा का वनस्पतिक नाम 'आढ़ातोडा वसाका' है। इसे संस्कृत भाषा में - वासकः तथा हिन्दी में अडूसा या रूसा आदि नामों से जाना जाता है।

इस लेख में 'अडूसा' वनस्पति में उपस्थित औषधीय गुणों का तथा उनके द्वारा विभिन्न रोगों जैसे पित्त विकार, रक्त पित्त, ज्वर, कामला, प्रमेह, खांसी, दमा, मुखरोग, पेट दर्द, सिर दर्द, जुकाम एवं मृगी आदि में किये गये उपचार एवं प्रयोग विधि का वर्णन किया गया है जिसे लेखक ने मध्य प्रदेश में वनस्पति सर्वेक्षण के दौरान एकत्रित किया है।

■ **रक्त पित्त : (नाक से खून आना)**

अडूसा के पत्ते का रस 20 ग्राम और 10 ग्राम शहद मिलाकर सुबह-शाम दो बार पीने से नाक से खून गिरना बंद हो जाता है।

■ **ज्वर की गर्मी :**

अडूसा के लगभग 25 पत्तेको साफ पानी से धोकर 1 लीटरपानी में अच्छी तरह उबाल लें फिर ठंडा करके छान लें। इसे आधा-आधा कप दिन में चार बार मिश्री डाल कर पिलाने से ज्वर की गर्मी, घबड़ाहट तथा प्यास आदि में आराम मिलता है।

■ **खाँसी :**

अडूसा के पत्ते को धोकर अच्छी तरह सुखा लें फिर महीन कूट कर कपड़े से छान लें और 100 ग्राम पत्ते के चूर्ण में 100 ग्राम मिश्री मिलाकर रख लें। इसे 2 चम्मच गुनगुने पानी के साथ दिन में चार बार लेने से खांसी में आराम मिलता है। इसके अतिरिक्त खांसी में खून आने पर अडूसा के ताजे पत्तों का रस 10 ग्राम तथा 5 ग्राम शहद दोनों को मिलाकर दिन में 3 बार पीने से खांसी में खून आना बंद हो जाता है तथा बलगम पतला होकर निकल जाता है

और श्वास का वेग भी कम हो जाता है।

■ **मुख रोगः**

अड़ूसा के पत्तों और जड़ की डाल को 10-10 ग्राम लेकर आधा लीटर पानी में खूब उबाल लें। इसके बाद थोड़ा सा ठंडा करके मुख में लेकर कुल्ला करें। इससे मसूढ़ों की सूजन तथा मुख के छाले ठीक हो जाते हैं।

■ **पेट दर्द :**

अड़ूसे की जड़ को अच्छी तरह धो लें तथा उसे सुखाकर खूब महीन कूट कर चूर्ण बना लें। 80 ग्राम चूर्ण में 20 ग्राम अजवाइन का चूर्ण तथा 10 ग्राम सेंधा नमक मिलाकर इसका मिश्रण बना कर रख लें फिर इसे 10 ग्राम नीबू का रस तथा 10 ग्राम अदरख के रस में मिलाकर एक-एक ग्राम की गोलियां बना लें तथा भोजन के बाद दो गोलियां पानी के साथ निगल जांए इससे पेट के दर्द में गुडगुडाहट तथा अरूचि आदि दूर हो जाती है।

■ **सिर दर्द :**

अड़ूसा के पत्ते की चाय बनाकर उसमें 1 चम्मच मिश्री का चूर्ण तथा सात काली मिर्च पीस कर मिला लें। इसे एक एक कप दिन में तीन बार पीने से जुकाम ठीक हो जाता है तथा कफ गल कर निकल जाता है।

■ **मृगी :**

अड़ूसा की पत्ती तीन सौ ग्राम मुनक्का एक लीटर पानी में डालकर उबाल लें। जब एक चौथाई पानी रह जाए तो उसे ठंडा करके छान लें और एक साफ शीशी में भरकर रख लें। प्रतिदिन सुबह शाम एक चम्मच अर्क के साथ 1 चम्मच शहद मिलाकर पीने से मृगी रोग ठीक हो जाता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अड़ूसा वनस्पति के प्रत्येग भाग जैसे फूल, फल, पत्ते तथा जड़ सभी को हम औषधि के रूप में प्रयोग कर सकते हैं। इसकी उपयोगिताओं को जनमानस में पहुंचाकर इससे अधिक से अधिक लाभ उठाया जा सकता है।

संवेदना हरण

● **नवीन चौधरी**
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण
कलकत्ता - 700 001

सुख सुविधा के सारे साधन, आराम तलब के उपादान
यह दूरभाष, टेलीग्राफी, टेलीप्रिण्टर ये वायुयान
लम्हें में उतने काम जिनमें पहले सदियों लगते थे
सोते थे मीठी नींद स्वस्थ होकर प्रातः जगते थे
दूरी और समय सदा उन पर निर्भय शासन करते थे
लम्बी दूरी जल्दी जाना है सुनकर ही मरते थे
वे पौधों के थे बन्धु सखा पशु पक्षी के जलचर के
वे रक्षक थे जंगल के, बान्धव थे खग-नभचर के
वे सिंह शावकों के मुंह के भी दांत गिना करते थे
पौरुष के बल पर वन को अभयारण्य किया करते थे
'सर्वे भवन्तु सुखिनः' को ही चरितार्थ किया करते थे
बहुजन हिताय बहुजन सुखाय श्रमदान किया करते थे
धरती माता, गंगा मैया से दूषण रखकर दूर
सुख से खाते और मचलते, सोते थे भरपूर
दूरी और समय रहे जैसे और जहां, हमें क्या लेना
जब तक प्रकृति कहे जी लेंगे जाओं कहें चल देना
दूरी और समय जीतने से हो गया देख संवेदना हरण
करके मनमानी जल थल से मानव करता है मृत्यु वरण।

खतलिंग - हिमलोक की एक झांकी

● एस० सी० मजूमदार एवं पी० सी विश्वकर्मा
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, देहरादून

जहां एक ओर हिमालय हरे भरे वनों, कल कल करते झरनों और बर्फ से ढ़की चांदी की तरह चमकती चोटियों के मनोरम दृश्यों के लिए प्रसिद्ध है वही दूसरी ओर अपने आंचल में अनेक जड़ी बूटियों, नाना प्रकार के फलों व फूलों के रूप में जन जीवन भी समेटे हुए हैं। यूं तो हिमालय की प्राकृतिक छटा, वानस्पतिक संपदा की नयनाभिराम सौंदर्य, और खनिज समृद्धि के विषय में कुछ भी कहना कभी भी पर्याप्त न होगा, फिर भी असाधारण पर्वतीय सौंदर्य और प्राकृतिक संपदा और विरासत की विशिष्टता की दृष्टि से इसके कुछ सुदूर क्षेत्रों का वर्णन करना निश्चित ही सुखद और रोमांचक होगा। यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि उत्तर प्रदेश के टिहरी जनपद में स्थित भिलंगना घाटी के प्रमुख आकर्षण "खतलिंग हिमनद" (खतलिंग ग्लेशियर) के दर्शन और वहां प्रवास का अवसर किसी व्यक्ति के लिए परम सौभाग्य का विषय होगा।

हिमालय के चित्र देखना तथा इसकी कथा-गाथा सुनना मुझे बचपन से अब तक रोमांचित करता रहा था। हिमालय के निकट से दर्शन करने का स्वप्न मैं अक्सर देखा करता था। इसीलिए जब एक दिन अचानक वहाँ जाने, ठहरने और इसे देखने का अवसर मिला तो सहसा विश्वास ही नहीं हो रहा था कि आखिर यह भी एक स्वप्न ही था या हकीकत।

खतलिंग के आसपास के क्षेत्रों का अन्वेषण का आदेश मिलते ही अभियान दल ने आवश्यक उच्च स्थलीय उपकरणों तथा ऊनी वस्त्र के अतिरिक्त मार्ग में भोजन पकाने तथा ठहरने के लिए आवश्यक सामग्री की तैयार कर ली। देहरादून से घोंसियाली के लिए बस सात बजे निश्चित समय से चलकर लगभग डेढ़ घंटे की यात्रा के बाद ऋषिकेश पहुंची। कुछ ही देर में हम काफी ऊँचाई पर पहुंच गये जहां से ऋषिकेश एक टापू की तरह दिखाई दे रहा था। कुछ दिनों पहले ही विदा हुई बरसात ने पूरे क्षेत्र को हरे-भरे पेड़ पौधों तथा झाड़ियों से सजा दिया था, जो यात्रा को सुखद बनाने में अपना पूरा योगदान दे रहे थे। नरेंद्रनगर, आगरा खाल होते हुए बस चम्बा पहुंची, जो कुछ देर पहले नीचे से बहुत ही सुन्दर दिखाई दे रहा था। इसके पश्चात् भागीरथी और भिलंगना का संगम-स्थल टिहरी आया जहां से यमुनोत्री और गंगोत्री के मार्ग अलग-अलग होते हैं। अब हमारी बस भिलंगना के उद्गम दिशा की ओर जा रही थी। हमारी दायीं ओर ऊपर से आती हुई भिलंगना का कल-कल संगीत बहुत ही मधुर लग रहा था।

नदी के उस पार, यानी हमारी बायी दिशा में स्थिति सीढ़ीनुमा खेतों, जिन्हें स्थानीय भाषा में पुंगड़ा कहते हैं, में हरी और सुनहली धान की बालियाँ लहलहा रही थीं। धान के इन्हीं खेतों के ऊपर स्थित थे कुछ गांव। संपूर्ण दृश्य किसी कुशल चित्रकार की कृति जान पड़ रहे थे।

घोंसियाली पहुँचे पर हमने बस बदली, अब हम भिलंगना के बायी ओर चीड़ के घने चंगल से होकर जा रहे थे। इन वृक्षों के तने से एक प्रकार का लासा (गोंद) निकलता है, जिसे पेण्ट उद्योगों में इस्तेमाल किया जाता है। सायं लगभग 5.00 बजे हम एक छोटे कस्बे गुत्थू पहुँचे जहां

हमारे ठहरने की व्यवस्था लोक निर्माण विभाग के एक सुन्दर विश्राम गृह में पहले से ही की जा चुकी थी। स्वच्छ नीले आकाश में एकादशी का चमकता चांद और उस पर मंद-मंद मधुर वायु का प्रवाह - पल भर में ही हम पूरे दिन भर की थकान को जैसे भूल ही गये। ऐसा लग रहा था जैसे यहां ईश्वर ने अपनी अमूल्य निधि हर तरफ बिखेर दी हो। दूसरे दिन सुबह ही हम ट्रेकिंग (पर्वतारोहण) पर निकल पड़े। अपना सामान खच्चरों की पीठ पर बांध कर हम पैदल चल दिये। रास्ता सीधी चढ़ाई का था परन्तु मन में छाये उत्साह से हम सब ऊपर पहुँच गए।

दोपहर लगभग दो बजे हम रीह पहुंच गये। हमारा सामान खच्चरों द्वारा पहले ही पहुंच चुका था। हमने खुले आकाश के नीचे विश्राम किया, भोजन पकाया। थकान के कारण उमड़ रही भूख में तथा यहां के इस प्राकृतिक वातारवरण में भोजन और भी स्वादिष्ट लग रहा था। यहां हमने अपने तम्बू में ही रात बिताई।

दूसरे दिन 10 कि० मी० की दूरी पर स्थिति गंगी की ओर चल पड़े। लगभग दो कि० मी० तक पहाड़ी की सीधी चढ़ाई थी, जिस पर चढ़ते हुए हमारी सांस फूल रही थी। कहीं-कहीं पर रास्ता इतना खराब था कि किसी भी समय पैर फिसलने का खतरा था। पहाड़ इतने ऊँचे कि जारा भी नीचे देखने पर सिर चकरा जाता। दोनों तरफ सुन्दर जेरानियम, पोटेटिला, पोगलिगोनम तथा विविध प्रकार के एस्टर आदि खिले थे। लगभग 1.30 बजे दोपहर में हम 10,000 फुट की ऊँचाई पर स्थित गांगी पहुंच गये। इस मार्ग पर यही अंतिम गांव था। जिधर भी देखें, पहाड़ ही पहाड़। एक तरफ दूर से खतलिंग की धूंधली छवि दिखाई दे रही थी। चारों तरफ रहोडोडेन्ड्रन (बुंरास) के घने जंगल थे। यह स्थान रथ जनजाति-बाहुल्य है जिनका मुख्य व्यवसाय भेड़ पालना है।

हमारा अगला पड़ाव कल्याणी था। गांगी से लगभग चार घंटे की पैदल यात्रा तय करके ही यहां पहुंचा जाता है। पहाड़ के ऊपर यह एक बड़ी सी समतल भूमि है। यहाँ पर रह रहे एकमात्र परिवार के मुखिया नाथू सिंह ने खाने की चीजें दी।

कल्याणी से खासुली लगभग 10 कि० मी० दूर है। चढ़ाई भी बहुत कम है। रास्ता भिलंगना के किनारे किनारे होकर गया है। इस पहाड़ी रास्ते के दोनों ओर असंख्य फूल पाए जाते हैं। नदी के उस पार भोजपत्र के वन हैं। खासूली से खतलिंग पहाड़ी की दूरी लगभग 12 कि०मी० है। हमें दिनभर में ही वहां जाकर वापस आना था। इसलिए हमें सबेरे तड़के ही रवाना होना पड़ा। हमारे चारों ओर झाड़िया ही थी। बड़े वृक्ष नहीं थे। अब हम खतलिंग के करीब आते जा रहे थे। हिमाच्छादित श्वेत चमकीली खतलिंग कुछ ही देर में हम लोग बर्फ से ढंकी खतलिंग के आधार स्थल पहुंच गए जो समुद्रतल से 12500 फीट ऊँचा है।

नीले आकाश के नीचे श्वेत खतलिंग एक अनुगम छवि के समान शोभायमान हो रही थी। बर्फ से ढकी खतलिंग श्वेत धूप में चांदी की तरह झिलमिला रही थी। इस अपूर्व दृश्य को देखकर ऐसा लग रहा था जैसे कि सामने बर्फ के एक टीले पर जटाधारी एवं त्रिशूलधारी महादेव आसन लगाए बैठे हों तथा उनकी जटा से गंगा निकल रही हो। थके हारे शरीर में एक दैवीय शक्ति का संचार हुआ। मन को एक विशेष आनन्द की अनुभूति हुई। पूर्ण संतुष्टि और विजय भावना के साथ हम वापस चल पड़े।

मुहावरे : आज के संदर्भ में

● **भगवती प्रसाद उनियाल**
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, उत्तरी परिमण्डल, देहरादून

पल पल बढ़ती आबादी
बनी देश पर भार
लक्ष्य बढ़ा साधन घटे
एक अनार है सौ बीमार।।
निर्वसना धरती हुई
तरु विहीन हो गये पहाड़।
विपदायें दिन प्रति दिन बढ़ीं
हो गई तिल से ताड़।।
महंगाई से त्रस्त सभी
हर वस्तु का भाव बढ़ा।
जीवन कड़वा घूंट हुआ अब
ज्यों करेला नीम चढ़ा।।
जन समुद्र के ज्वार में डूबा
आकण्ठ प्रगति का गात
हम वही हालात वही हैं,
ढ़ाक के जैसे तीन पात।।
आज नहीं तो कब संभलेंगे
देर करेगी कल परसों।
न तो उगी है, न ही उगेगी,
बंधु! हथेली पर सरसों।।

गुजरात के सागर तट के कुछ उपयोगी पौधे

● **महेश कोठारी और मधुसुदनराव केलम**
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पश्चिमी परिमण्डल, पुणे - 411 050

भारत के पश्चिमी किनारे स्थित गुजरात राज्य 1,95,945 वर्ग किलोमीटर भौगोलिक क्षेत्रफल वाला एक विशिष्ट भू-प्रदेश है जिसके उत्तर-पश्चिम में कच्छ की दलदली एवं पर्वतीय विस्तारवाली मरूभूमि पश्चिम में प्रसिद्ध गिरनार, बरड़ा एवं शेत्रुंजी की पर्वत श्रृंखलावाला सौराष्ट्र और पूर्व भाग में ताप्ती, साबरमती, नर्मदा आदि नदियाँ और दक्षिण पूर्व में सह्याद्रि के पर्वत मालायें हैं, गुजरात के वायुशिफ (कच्छ पौधों) के सर्वेक्षण की परियोजना के अंतर्गत कच्छ पौधों के साथ संलग्न करीब 102 समुद्रतटीय पौधे इकट्ठे किये गये और भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के पश्चिमी परिमन्डल के पादपालय में संग्रहित किये गए। उनमें से करीब 6 पौधों की जानकारी प्रस्तुत लेख में दी गई है। हरकुच कांटा/निवागुर (अकान्थस इलिसीफोलीअस)- अकान्थेसी।

1. 2 मी० ऊंचाईवाला क्षुप। पत्ते अंडाकार - दीर्घलंबगोल, पर्णकिनारी दंतुरित, कंटकी। पुष्प भुरे - जांबली, अग्रीय व कक्षीय पुष्पविन्यास में। फल अंडडाकार - दीर्घ लंबगोल बादामी, चमकीले,

   पुष्पफलकाल : अप्रैल - मई।

   प्राप्ति : द० गुजरात के तिथल, उदवाड़ा और उमरगांव की खाड़ी विस्तार में बिखरा हुआ है।

   उपयोग : संपूर्ण पौधा दमा में और उसका काढ़ा अपचन में उपयोगी। पत्तों की लुगदी संधिवात एवं सर्पदंश में उपयोगी।

2. गोरखडी/कपुरी माधुरी [एरवा लानाटा]- एमरेन्थेसी 20-40 से० मी० ऊँचा, रोमयुक्त छोड। पत्ते लंबगोल या व्यस्त अंडाकार। पुष्प सफेद, कक्षीय अदंडी/शुकी पुष्प विन्यास में। फल काले, अंडाकार।

   पुष्पफलकाल : सालभर

   प्राप्ति : पूरे गुजरात में सपाट, रेतीले विस्तार में, विपुल प्रमाण में।

   उपयोग : संपूर्ण पौधा भात के साथ सफेद पेशाब की बीमारी में, अतिसार एवं कॉलेरा के उपचार में काम में आता है। पत्ते कर्ण - दर्द जड़े सर्पदंश में उपयोगी हैं।

3. दमाहन घमासा [फेगोनिआ क्रेटिका] जायगोफाइलेसी

   30-60 सेमी० ऊँचा, कंटकी अंतझुप। पत्ते रेखाकार, अदंडी, उपकर्ण कंटकीय, पुष्प जांबली या गुलाबी, कक्षीय, एकाकी। फल अंडाकार, ग्रंथील रोमयुक्त, पंचकोष्ठीय।

   पुष्पफलकाल : अगस्त - दिसम्बर

   प्राप्ति : कच्छ, सौराष्ट्र और ख्वाराघोडा [उत्तर गुजरात], सामान्य।

   उपयोग : पूरा पौधा मानसिक रोग में, रक्त स्राव के नियमन, ज़हर के कारण उत्पन्न किसी भी बीमारी में और खांसी, ज्वर पित्त आदि तकलीफ में

नियमन, पौष्टिक, गुणकारी है। उसके साथ उबाला हुआ पानी से स्नान करने से चर्म-दर्द में राहत। उसकी जड़ों का कवाथ रक्त-सुधार के लिए उपयोगी इंधन एवं घास-चारे के लिये भी इस पौधे का उपयोग होता है।

4. काबरा/कांटालो कन्थारो [केपेरीस स्पाईनोसा प्रकार-गेलीआटा] - केपेरेसी भूप्रसारी क्षुप। पत्ते मांसल, अंडाकार-गोलाकार, पर्णाग्र वक्र-कंटकीय। पुष्प सफेद, कक्षीय, एकाकी, फल व्यस्त-अंडाकार, पक्व होने पर लाल।

पुष्पफलकाल : अक्टूबर - मई प्राप्ति : कच्छ, सौराष्ट्र में।

उपयोग : उसके मूल [जड़े] की छाल पक्षघात, जलोदर, संधिवात एवं सर्दी में उपयोगी। पौधों का रस कान में डालने से कीड़े मर जाते हैं। उसके पत्ते और फल अचार बनाकर खाये जाते हैं। पत्ते एवं पक्के फल पशुओं के चारे हेतु काम आते हैं।

5. रुद्रवंती/रुदंती, पड़ीआ [क्रेसा क्रेटीका] - कन्वोल्वुलेसी 10-20 सेंमी० उंचे, सीधे रोमयुक्त पौधे। पत्ते अंडाकार या लंबगोल, रोमयुक्त, पुष्प सफेद या गुलाबी। फल अंडाकार।

पुष्पफलकाल : दिसम्बर - जुलाई

प्राप्ति : पुरे गुजरात के समुद्र तट पर विपुल मात्रा में।

उपयोग : संपूर्ण पौधा मधुमेह; श्वास, कफ, रक्तपित्त, टी० बी० एवं नेत्र रोग में उपयोगी हैं। वैदिक शास्त्र में उसे 'रसायनी' बोलते हैं। पूरा पौधा घासचारे के नाते अत्यंत उपयोगी।

6. शंखपुष्पी, श्यामक्रांता/काली शंखावली (ईवोल्वुलस अल्सीनोईडीस)- कन्बोल्वुलेसी रोम युक्त पत्ते लंबगोल या दीर्घ - लंबगोल, पुष्प सफेद, कक्षीय एकाकी, फल गोल।

पुष्पफलकाल : पूरे वर्ष

प्राप्ति : पूरे गुजरात में

उपयोग : संपूर्ण पौधा ज्वर-हारक, पौष्टिक, आंत के रोगों को दूर करनेवाला, गर्भ रक्षक एवं उसकी वृद्धि में पोषक, पित्त, कोढ़, बहुमुत्रता एवं ज्ञानतंतुओं की कमजोरी को दूर करनेवाला है। पत्ते दमा एवं कंठ दर्द में उपयोगी है।

वनस्पति

● ए० कुजुर
केन्द्रीय वनस्पति प्रयोगशाला, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, हावड़ा

वनस्पति- वनस्पति- वनस्पति
आखिर है क्या ये वनस्पति?
पर्वत शिखर से मैदान
और मैदान से सागर तक
छाई हुई है जो हरियाली
उसे कहते हम वनस्पति।

वनस्पति - वनस्पति - वनस्पति
आखिर किस काम आता ये वनस्पति?
क्लोरोफिल युक्त वनस्पति
करता शोषण कार्बन डाई ऑक्साईड का
और सृजन करता यह आक्सीजन का
दया धर्म का सबसे बड़ा काम
करके जग को देता जीवन दान।

वनस्पति - वनस्पति - वनस्पति
आखिर हमारा फ़र्ज़ क्या है इसके लिये?
आओ हम यतन करें इसकी रक्षा के लिये
करके पर्वतों में एक्सप्लोरेशन टूर
करें अध्ययन इसका दूर-दूर
चलो चले ध्रुवों तक इसकी खोज में
उठा लावें स्पेशिमेन्स बड़ी जोश में।

वनस्पति - वनस्पति - वनस्पति
आखिर हमारे लिये करता क्या है वनस्पति ?
वायु शुद्ध करना वनस्पति का पहला क़ाम
सारे जग में प्रदूषण रोकना इसका महा काम
कूक - हूकर - बर्कील - प्रेन संतापाउ और कपाड़िया
कर गये न्योछावर इसको अपना प्राण
अब इसकी रक्षा करना वनस्पति सर्वेक्षण का काम।

''नीम'' - एक चमत्कारी पौधा

● **पी० एस० एन० राव एवं ए० शुक्ला**
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, अन्डमान एवं निकोबार परिमंडल, पोर्ट ब्लेयर

नीम को अंग्रेजी में मारगोसा एवं वनस्पति विज्ञान में *अजाडिरेक्टा इण्डिका* के नाम से जाना जाता है।

भारतीय ऋषियों ने इस पौधे के सभी भाग, जिसमें छाल से लेकर फल तक का, दवाइयों तथा कीटनाशक के रूप में पाये जाने वाले गुणों का पता लगा लिया था। भारत में ''नीम'' की पूजा होती रही है। पौराणिक कथा प्रचालित है कि समुद्र मंथन के दौरान जब अमृत देवताओं को प्रदान किया गया उसी समय कुछ बूंद अमृत नीम के ऊपर भी गिर गया जिससे इस पौधे में चमत्कारी शक्ति आ गई। नीम के औषधीय एवं कीटनाशक गुणों का उल्लेख आयुर्वेद में उपस्थित है। इससे यह पुष्टि हो जाती है कि नीम पौधे की जानकारी ''पूर्व एशिया सभ्यता'' को थी। शायद ही ऐसी कोई बीमारी होगी जिसमें नीम के प्रभावी उपयोग का उल्लेख न हो। 1000 ई० पू- प्रसिद्ध आचार्य सुश्रुत ने नीम का विस्तृत अध्ययन व उपयोग किया था।

विश्व के पश्चिमी देशों में नीम बहुत तेजी से ख्याति अर्जित कर रहा है। उदाहरणार्थ - फ्लोरिडा, दक्षिणी कैलीफोर्निया एवं कैरेबियन देशों में यह विश्वास किया जाने लगा है कि विश्व की तमाम समस्याओं का समाधान निश्चित रूप से ''नीम'' कर देगा। वैज्ञानिकों ने जान लिया था कि इस पौधे का ''नाशीजीव नियंत्रण'' में उपयोग, एक नया युग होगा, जो प्रदान करेगा लाखों सस्ती दवाईयां, मानव जनसंख्या वृद्धि में रोक, और शायद कम करेगा, भूमिक्षरण, जंगलोंकी कटाई व पृथ्वी के बढ़ते हुए समस्या प्रधान तापक्रम को।

नीम का कीटनाशक एवं औषधीय उपयोग एक चमत्कारी वास्तविकता है। भारतीय ग्रामीणांचल में कायम परम्परा में आज भी बीमारियों से मुक्ति के लिये नीम की कोपलों (नव विकसित पत्तियों) को प्रातः काल, खाली पेट, चबाना एवं पत्तियों के पानी से स्नान करना शामिल है। अनाज के भण्डारण के समय भण्डार कीटों से अनाज को सुरक्षित रखने के लिए अनाज में नीम की पत्तियों को मिलाकर भण्डारण किया जाता है। रेशमी व ऊनी कपड़ों को ''सिल्वर फिश'' व अन्य कपड़ों को कीटों से बचाने के लिए नीम का उपयोग किया जाता है।

जब कभी नीम का पौधा पीपल के पौधे के साथ जुड़ा हुआ होता है उस पौधे की पूजा की जाती है। संस्कृत भाषा में निम्बा के नाम से चमत्कारी पौधे, नीम को अरिस्तू ने आंख मूंद कर उपयोग किया था। आज विज्ञान एवं तकनीकी आधुनिकता के साथ उस पौधे की भरपूर उपयोगिता सामने आई है। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, राष्ट्रीय प्रतिरक्षा विज्ञान संस्थान, नई दिल्ली एवं संघीय राज्य राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी ने पिछले दो दशकों में इस सन्दर्भ में महत्वपूर्ण योगदान किया है, जिसमें पौधे का कोई भी हिस्सा अनुपयोगी नहीं है। भारतीय आयुर्वेद औषधि विज्ञान में नीम का तेल सबसे पुराना उपचार है यह एक प्रभावी व

परम्परागत कामयाब उपचार है।

नीम के बीज का तेल ''निम्बीडीन'' नामक रासायनिक यौगिक धारण करता है जो कि लसिका ग्रन्थि के तपेदिक को ठीक करने की शक्ति रखता है एवं कुष्ठ, गठिया, कृमि, चर्मरोगों के उपचार में भी प्रभावी है। यह बालों के लिए स्वास्थवर्धक, बल वर्धक औषधि साबित हुआ है। इसी प्रकार नीम की छाल बलवर्धक औषधि, एस्ट्रिनजैन्ट, बवासीर रोधक, उबकाई एवं उल्टी में लाभकारी, चर्मरोग में प्रभावी, पायी गई है। यहां तक कि इसमें अल्सर को स्वस्थ करने के गुण भी विद्यमान है। इसी तरह से नीम की पत्तियों को एक प्रभावी एण्टीसेप्टिक के रूप में जाना जाता है एवं बहुतायत से प्रयोग में लाया जाता है जबकि चेचक, माता, मुहांसे, पीलिया, छाले, फोड़ा, गिल्टियों, ग्रंथिल ट्यूमर को भी यह ठीक करता है।

हमारे देश में आज भी दांतों को साफ करने के लिये नीम के कोमल टहनियों का उपयोग किया जाता है जिसमें अनोखी बात यह है कि वह ब्रश व पेस्ट दोनों का काम अकेली करती है। नीम के फूलों की मीठी सुगन्ध को हम अनदेखा नहीं कर सकते, इसका सत जहां एक तरफ उत्तेजक है वहीं दूसरी तरफ पाचनक्रिया को प्रभावी रूप से ठीक करता है जिससे कब्जियत दूर हो जाती है। हमारे देश के कुछ राज्यों में नये वर्ष के उपलक्ष में मनाये जाने वाले उत्सव में इसका ''प्रसाद'' के रूप में उपयोग होता है। नीम के पुष्प, आम, गुड़ और इमली मिलाकर बांटा जाता है इसके कड़वे स्वाद के साथ मान्यता है कि जो इसे खायेगा पूरे वर्ष उस परिवार में खुशहाली व सम्पन्नता बनी रहेगी। यह फूलों के औषधीय गुणों के द्वारा स्वास्थय बनाये रखने का संकेत है। नीम पौधे से प्राप्त होने वाला गोंद, स्थाई, त्वचा रोग व कोढ़ जैसे असाध्य रोगों को ठीक करने का गुण रखता है। समाज में इस पौधे के प्रति लगाव इस चमत्कारी पौधे की उपयोगिता को सिद्ध करता रहा है। लगातार हो रहे अनुसंधान से पौधों में पाये जाने वाले रसायन विशेष की उपयोगिता की जानकारी मिली है, साथ ही पौधे का कौन सा भाग किस विशेष कार्यमें लाया जा सकता है व उनकी अनुकूलता कहां तक संभव है। इसका उपयोग कृषि में नाइट्रोजन का बांधने वाला है। नीम अवर्णित यूरिया ज्यादा प्रभावी पाया गया है। जबकि ज्यादा सस्ता प्राकृतिक खाद है। यह नीम के गूदेदार फल से बनाये जाने वाली खली से निर्मित होता है।

इस पौधे के लगभग सभी भाग कड़वे हैं। इसके कड़वेपन के सिद्धान्त पर, नीम के तेल की खोज की गयी जो कि देशी दवाओं के रूप में लाया जाता है। इस मारगोसा तेल से सस्ता व औषधीय साबुन तैयार किया जाता है। जब सक्रिय ''कीटनाशी'' रसायन की उपस्थिति, नीम के फल में पायी गयी तो सन् 1982 में नीम की खोज में एक नया मोड़ आया। कीड़ों पर इसका जैविक प्रभाव दिखाई पड़ा। यह एक प्रतिआकर्षक या दूर भगाने वाला, कीड़ों के द्वारा भोजन ग्रहण क्षमता को रोकने वाला, तथा कीड़ों में अण्डा देने की क्षमता को धीमा करे वाला गुण है। यह कीड़ों में प्रजनन क्षमता को कम करता है वह जनसंख्या वृद्धि को रोकता है। साथ ही कीड़ों में सीधा हल्का जहरीला प्रभाव डालता है। यह एक नीम ही है जो एक में छः गुणों को दर्शाता है। फ्लोरिडा की एक विकसित कम्पनी आजकल नीम का आयात कर रही है और एक कीटनाशी दवाई अपने ब्रांड के अन्तर्गत बना रही है, जिस पर उसका एकाधिकार है। नीम का उपयोग ऐसे कीटनाशक रसायन बनाने में हुआ है जो लगभग 200 प्रजातियों से निपटने की क्षमता रखता है जिसमें गोभी का लूपर कीट, मैक्सीन बीन भ्रंग, जिप्सी मॉथ, तिलचट्टा, धान के प्रमुख कीट, कपास के कीट, मच्छर व मक्खियाँ शामिल हैं।

आकौता की बीमारी में नीम की पत्तियों का पुल्टिस द्वारा इलाज किया जाता है। इसके बीजों के तेल से दाद को नष्ट किया जाता है। ग्रामीण किसान मक्खियों, मच्छरों को दूर भगाने के लिये नीम पत्ती को जलाकर धुआँ करते हैं, इससे प्राप्त तेल का उपयोग बैलगाड़ी के पहियों में किया जाता है, सड़कों के किनारे वृक्षारोपण लाभदायक साबित होता है। इसकी लकड़ी से दरवाजे तथा पर्दों के पैनल, खिलौने आदि बनाते हैं।

विकासशील देशों में लगभग 3,75,000 लोगों की मृत्यु सालाना कीटनाशकों के प्रयोग से होती है। सिंथेटिकस कीटनाशक रसायन को खाली करने में लगभग 10,000 व्यक्ति दुर्घटनाग्रस्त होकर मरते रहते हैं। *अजाडेरेक्टा इण्डिका* नाम के इस पौधे का मूलतः उद्‌गम भारत है। पर आजकल पूरे भारत-मलेशियन क्षेत्र के साथ उष्ण कटिबंधीय अफ्रीका में फैल चुका है। यह पौधा दक्षिण के सूखे जंगली क्षेत्रों में पाया जाता है। यह सभी प्रकार की भूमि के साथ समुद्रतल से 2000 मीटर की ऊँचाई तक आसानी से उगता है। यह एक अच्छा स्थानीय पौधा है जो जंगलात (वनों को) लगाने में अनुकूल है। यह तराई या नम जगहों में ज्यादा वृद्धि नहीं करता। इसे सदाबहार पौधा बताया गया है इसमें पतझड़ भीदेखने को मिलता है, जबकि गर्मियों में छाया देने वाला वृक्ष है, कुछ संरक्षकों का अनुमान है कि भारत में लगभग 19-20 लाख नीम के पौधे होंगे। यह पौधा फरवरी -मार्च में फूल धारण करता है तथा अप्रैल से जून तक फल लगते हैं। नीम 4-5 वर्ष की उम्र से 100 वर्षों तक फलता फूलता है। भारत में अनुमानतः लगभग 6,00,000 टन कुल उत्पादन वार्षिक जबकि प्रति पौधा 30 कि० ग्रा० वार्षिक फल उत्पादन होने का अनुमान है। जिनकी अनुमानित कीमत 6,000/- मिलियन रु० तक है। यह ग्रामीण क्षेत्र में लाभप्रद रोजगार के साथ - बीज एकत्रीकरण कर नकद फसल के रूप में अपनाया जा सकता है। जोकि अपने प्रकार की एक अलग ही फसल होगी।

नीम एक आकर्षक पौधा है जो बहुत उत्साह पैदा कर रहा है। जरूरत है इस चमत्कारी पौधे के दोहन की, ताकि भारत में यह एक अनिश्चित संकल्प न रह जाय। वास्तव में यह इस काबिल है कि इसका भरपूर उपयोग करके प्राकृतिक कीट नाशक बनाया जाय। जो हमें पर्यावरण के लिए खतरा बन जाय जहरीले रासायनिक कीटनाशकों के प्रयोग से बचा सके। यह बहुपयोगी पौधा मनुष्य जाति के लिए कल्याणकारी चमत्कारी है।

दुधवा राष्ट्रीय उद्यान - बारहसिंघों का घर

● भगवती प्रसाद उनियाल व सुरेन्द्र सिंह
उत्तरी परिमण्डल, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण
देहरादून

उत्तर प्रदेश के लखीमपुर खीरी जिले में स्थित प्रदेश की राजधानी लखनऊ से लगभग 240 कि०मी० की दूरी पर स्थित दुधवा राष्ट्रीय उद्यान सन् 1958 में सोनारीपुर वन्य जीवन अभयारण्य के रूप में अस्तित्व में आया था। उस समय इसका कुल क्षेत्र 63 वर्ग कि० मी० था। सन् 1977 में इसका क्षेत्र बढ़ाकर 614 वर्ग कि० मी० कर दिया गया और दुधवा राष्ट्रीय उद्यान नाम दे दिया गया। वर्तमान में किशनपुर वन्य जीव अभयारण्य के साथ यह बाघ परियोजना के अंतर्गत ले लिया गया है।

इस उद्यान में यों तो कई प्रकार के पक्षी व जंगली जानवर हैं पर विशेष उल्लेखनीय हैं बंगाल फ्लोरिकन, हिस्पिड हेअर, बारहसिंघा, टाइगर व कुछ वर्षों पहले आसाम से लाये गये गैंडे। बारहसिंघों का तो इसे कभी गढ़ कहा जाता था। पार्क के बीच से पहता जोराहा नाला व सुहेली नदी पानी के मुख्य प्राकृतिक स्त्रोत हैं। उद्यान की पश्चिमी व दक्षिणी सीमा बनाती सुहेली नदी के किनारे स्थित घास के बड़े-बड़े मैदान जिन्हें स्थानीय भाषा में ''फांटा'' कहते हैं, व इनमें स्थित ''लाल'' बारहसिंघों का प्राकृतिक आवास हैं। ये घास के मैदान उद्यान के कुल क्षेत्र का 18% हैं। इनमें मुख्य हैं: कुसुम्मा, फांटा, ककराहा ताल, सोनारीपुर फांटा व सतियाना।

इन फांटों में घासों की लगभग एक सी ही जातियों का सम्मिश्रण है जैसे - सिंधुर (बोंथ्रओ क्लोआ इटरमेडिया), दाब (डेस्मोस्टेकिया बाइपिन्नाटा), नरकुल (फ्रेगमाइटिस कार्का) मूंज (सैकरम मुंजा) हरंग (सैकरम नरेंगा), कांस (सैकरम स्पोन्टेनियम), उल्ला (थेमेड़ा अरून्डिलेसिया), रेतवा (मिस्कैन्थस फस्कस) आदि। बीच-बीच में बस्सी (अप्लूडा म्यूटिका) व इंपेराटा सिलिंड्रिका भी हैं जो कि बारहसिंघों का प्रिय भोजन कहे जाते हैं। सतियाना में जराकुस (सिम्बोपोगान फलैक्सुओसस) भी इन मैदानों में उगती देखी गई। यहाँ फांटों में सेमल (बाम्बेक्स सिबा) व खैर (अकेसिया कटेचू) के वृक्ष भी हैं। ककराहा ताल में घासों के साथ पटेरा (टाइफा एलीफंटिना) भी पैर जमाये हैं।

सोनारपुर फांटा में चियोनाक्ने कोइनिगी, सोर्घम निटिडम व यूलेलिया लैश्चिआउल्टियाना भी हैं। यहाँ भी घास के मैदानों के बीच पिंडारा (रंडिया यूलिजिनोसा) व सेमल के वृक्ष हैं। पिडारा के फल शाक के रूप में पकाये जाते हैं तथा सेमल भी कुछ आर्थिक महत्व का वृक्ष है। मैदान के किनारों पर बेर (जिजीफस माउरीटियाना), औषधोपयोगी मरोड़फली (हेलिक्टेरेस आइसोरा) व ग्रेबिया हेलिक्टेरीफोलिया की झाड़ियाँ भी हैं।

सोनारीपुर फांटा में स्थित ''बाँकेताल'' के आस पास पाई जाने वाली घासें कुछ भिन्न हैं। यहाँ धान की जंगली जाति तिन्ना (ओराइजा रुफीपोगॉन) का बाहुल्य है जो कि बारहसिंघों का प्रिय भोजन कही जाती है।

व्रत-उपवास के समय मनुष्य भी इस घास के बीजों को फल के रूप में खाते हैं। घास की एक दूसरी जाति इकाइनोक्लोआ क्रस गाल्ली भी तिन्ना के साथ उगती देखी गयी। सुन्दर लाल फूलों वाली शाक पेंटापेटेस फोइनीसिया भी यहाँ दिखाई पड़ी। इस ताल के किनारे पर बारहसिंघों को देखने के लिए स्थान बना हुआ है। शाम 4-5 बजे का समय इसके लिए उपयुक्त रहता है। हमने भी यहाँ बारहसिंघे देखे। कुछ ताल के अन्दर जलीय वनस्पतियों का भक्षण करते हुए व कुछ बाहर विचरण करते हुए।

उद्यान में साल (शेरिया रोवस्टा) मुख्य है। स्थान-स्थान पर सागवान (टेक्टोना ग्रांडिस) के रोपित वन भी हैं। एक दो स्थानों पर यूकेलिप्टस भी दिखाई पड़े, निश्चित रूप से लगाये गये। आरोही पौधों में प्रमुख है रंगोया (टिलियाकोरा अक्यमिनाटा)। नरावेलिया जेलानिका भी अपने फूलों की सुगंधि से ध्यान आकृष्ट कर लेता है।

चीतल, बंदर, जंगली सुअर के अतिरिक्त भालू व हाथी भी यहाँ हैं। नेपाल से आया हाथियों का एक झुण्ड भी यहाँ बस गया है। शाम ढलते ही विभिन्न प्रकार की आवाजें जंगल में गूंजने लगती हैं, इसी कारण हम लोग भी कार्य समाप्त कर शाम ढलने से पहले ही बेलरायां के वन विश्राम भवन लौट आते थे। पथ प्रदर्शक के रूप में हमारे साथ वन्य जीव विभाग के सह वन संरक्षक श्री कबीर अहमद थे जो जंगल के अनुभव सुनाकर हमें रोमांचित कर देते थे। एक शाम तो गजराज से सामना हो ही गया। ''अब क्या होगा? यही सबकी प्रतिक्रिया थी। गजराज शायद हमारी मनः स्थिति समझ गये थे, सड़क पार कर चल दिये।

आसाम से लाये गये गैंडे यहाँ ककराहा ताल में आनन्द पूर्वक जीवन यापन कर रहे हैं। हम यहाँ हाथी पर सवार होकर गये। घासें इतनी ऊँची कि हाथी पर बैठे हम घास की तुलना में बौने थे। यों उद्यान पर्यटकों के लिए 16 नवम्बर से खुलता है परन्तु आवश्यक कार्य के कारण हमें मध्य अक्टूबर में ही आ जाना पड़ा। इन दिनों घास के इन मैदानों के भीतर झांकना भी कठिन होता है, पता नहीं कहाँ कौन-सा जानवर बैठा हो?

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण में राजभाषा कार्यान्वयन से सम्बन्धित गतिविधि

अंडमान निकोबार परिमंडल पोर्ट ब्लेयर	: वर्ष 1993-94 में राजभाषा कार्यक्रम के कार्यान्वयन में विशिष्ट योगदान एवं सहयोग के लिए डा० बी० के० सिन्हा और श्रीमती मेरी रोजलीन बेक को नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, पोर्ट ब्लेयर द्वारा श्रेष्ठता प्रमाण पत्र।
उत्तरी परिमंडल, देहरादून	: दि० 25.11.94 तथा 21.3.95 को राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठकों में अन्य मदों के अलावा परिसर समाचार पत्रिका "हरीतिमा" के प्रकाशन के प्रस्ताव पर चर्चा। 5.12.94 से 9.12.94 एवं 3-7 अप्रिल 1995 को हिन्दी कार्याशाला 12-16 सितम्बर 94 हिन्दी सप्ताह का आयोजन
पश्चिमी परिमंडल, पुणे	: 8.9.94 - 14.9.94 हिन्दी सप्ताह का आयोजन 28.3.1995 राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक
अरूणाचल प्रदेश परिमंडल, इटानगर	: 14-21 सितम्बर 1994 हिन्दी सप्ताह का आयोजन
मध्य परिमंडल, इलाहाबाद	: 13.1.95 राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक
केन्द्रीय वनस्पति प्रयोगशाला हावड़ा	: 22, 23 फरवरी, एवं 1 मार्च 1995 हिन्दी कार्यशाला
केन्द्रीय राष्ट्रीय पादपालय, हावड़ा	: 27-29 मार्च 1995 हिन्दी कार्यशाला
औद्योगिक अनुभागः भारतीय संग्रहालय, कलकत्ता	: 22-24 मई 1995 हिन्दी कार्यशाला

कार्यालयों का निरीक्षण

दि० 20,21 अप्रैल 1995 को शुष्क क्षेत्र परिमंडल, जोधपुर कार्यालय में राजभाषा के प्रगामी प्रयोग का निरीक्षण किया गया।

कलकत्ता नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (क्षेत्र-9) की बैठक

दि० 13 जून 1995 को डा० प्रभात कुमार हाजरा, निदेशक, भा व स की अध्यक्षता में कलटालिक (क न रा भा का स) क्षेत्र-9 के सदस्य कार्यालयों की बैठक केन्द्रीय राष्ट्रीय पादपालय भवन, हावड़ा में हुई।

मुख्यालय

: 23, 25, 27 जनवरी 1995 तथा 26-29 जून 95 हिन्दी कार्यशाला

: 10 नवम्बर 1994, 8 फरवरी 1995, 12 मई 95 तथा 3 अगस्त 95, राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक

: दि० 12-16 सितम्बर 1994 हिन्दी दिवस, सप्ताह के अवसर पर आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं में निम्नलिखित कर्मचारियों को पुरस्कार प्रदान किए गए

निबन्ध प्रतियोगिता

प्रथम पुरस्कार	श्री विमलेन्दु मित्र
द्वितीय ,,	,, रवीन्द्र नाथ चटर्जी
तृतीय ,,	,, सुरजीत घोष
सांत्वना ,,	,, अशोक बसु
	,, मिरी राम

वाद-विवाद प्रतियोगिता

प्रथम पुरस्कार	श्री ए कुजूर
द्वितीय ,,	,, एस आर घोष
तृतीय ,,	,, डा० पी आर सूर
	,, सुभाष नाग

टंकण प्रतियोगिता

प्रथम पुरस्कार	श्री अशोक बसु
द्वितीय ,,	,, मिरी राम
	,, शरत चंद्र सरकार

कविता पाठ (आवृत्ति) प्रतियोगिता

प्रथम पुरस्कार	श्री रवीन्द्र नाथ चटर्जी
द्वितीय ,,	श्री सुभाष नाग
तृतीय ,,	श्री अशोक बसु
सांत्वना ,,	श्री शरत चन्द्र सरकार

राजभाषा विभाग के आदेशों के अनुसार 12-16 सितम्बर 1994 को कर्मचारियों को प्रेरणा देनेवाले विभिन्न कार्यक्रमों के आयोजन हुए।

प्रोत्साहन योजना

वर्ष 1994-95 अवधि में हिन्दी में काम करने के लिए निम्नलिखित कार्मचारियों को पुरस्कार प्रदान किए गए

प्रथम पुरस्कार	1 श्री शरत चन्द्र सरकार
	2 श्री सुरजीत घोष
द्वितीय पुरस्कार	1 श्री अरूण कुमार चट्टोपाध्याय
	2 श्री अशोक बसु

हिन्दी में काम करना आसान है, शुरू तो कीजिये।
बोलचाल की हिन्दी का प्रयोग करें।

राजभाषा विभाग

गृह मंत्रालय, भारत सरकार

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के कुछ महत्वपूर्ण नये प्रकाशन

पत्रिका

(दी बुलेटिन ऑफ दी बाटनिकल सर्वे ऑफ इण्डिया वेजिटेशन, टैक्सोनामी, इकोलोजी, साइटोलोजी व आर्थिक वनस्पति के अध्ययन सम्बन्धी पादप विज्ञान की तिमाही पत्रिका)

खण्ड XXV (1983) सिल्वर जुबली वाल्युम : रु० 250/- या $ 80.00

द्विशतवार्षिकी खण्ड

खण्ड XXVIII (1986) : रु० 500/- या $ 160.00

खण्ड XXIX (1987) : रु० 828/- या $ 260.00

खण्ड XXXII (1990) : रु० 208 या $ 68.00

फ्लोरा ऑफ इण्डिया सीरीज : सीरिज 1

फेसिकल 19 (एलेंजिएसी बर्मेनिएसी, कोक्लोस्पर्मेसी, कोनेंसी, लार्डिजेवेलेसी, लोबेलिएसी, मैल्वेसी व निसेसी, (पेज 1-251) 1988 : रु० 280/- या $ 60.00

फेसीकल 20 (बार्क्लेयेसी, कबोम्बेसी, नेलुबोनेसी, निम्फिएसी, सेबिएसी, स्टैकिरेसी, सिम्लीकेसी, टेट्रेसेंट्रेसी, जाइगोफिलेसी) (पेज 1-194 + 13) 1990 : रु० 84/- या $ 28.00

स्टेट फ्लोरा एनेलसिस : सीरिज 2

फ्लोरा ऑफ तमिलनाडु, एडिटेड बाय ए एन हेनरी वी चित्रा एण्ड एन पी बालकृष्णन वाल्युम 3 (पेज - 1-171) 1989 : रु० 84/- या $ 26.00 (खण्ड 1 व 2 भी उपलब्ध हैं ।)

फ्लोरा ऑफ राजस्थान, एडिटेड बाय बी बी शेट्टी एण्ड बी सिंह खंड 1 पेज 1-451+ 16 रंगीन व 20 श्वेत-श्याम) फोटो 1987 : रु० 400/- या $ 80.00

वाल्युम 2 (पेज 453-860) 1991 : रु० 144/- या $ 42.00

वाल्युम 3 (पेज 861-1246 एवं 12 रंगीन 37 रेखाचित्र) 1993 : रु० 168/- या $ 52.00

फ्लोरा ऑफ सौराष्ट्र - पी बी बोले एण्ड जे एम पाठक

पार्ट II (पेज - 1-302 + 4) 1988 : रु० 104/- या $ 32.00

पार्ट III (पेज 303-553) 1988 : रु० 80/- या $ 24.00

फ्लोरा ऑफ केरल-ग्रासेज : पी वी श्री कुमार एवं वी जे नायर (पेज 1:470 + 96 इलेस्ट्रेशन्स) 1991 : रु 268/- या $ 56.00

फ्लोरा ऑफ मध्यप्रदेश - वाल्यूम I डी० एम० वर्मा, एन० पी० बालाकृष्णन एण्ड आर० डी० दीक्षित (पेज 1-668 एवं 20 चित्र + 52 प्लेट्स) 1994 : रु० 324/- या $ 64.00

डिस्ट्रिक्ट फ्लोराज : सीरीज 3

फ्लोरा ऑफ नल्लमलै - जे एल इलिसा, वाल्युम I (पेज 1-220 एवं 9 फो टो + 1 मै प)1987 : रु 72/- या $ 24.00

वाल्युम 2 (पेज 221-490) 1990 : रु० 76/- या $ 24.00

फ्लोरा ऑफ पालघाट डिस्ट्रिक्ट (इनक्लुडिंग साइलैण्ट वैली नेशनल पार्क, केरल) इ वज्रबेलु (पेज 1-646+15 श्वेत-श्याम फोटो) 1990 : रु० 276/- या $ 56.00

फ्लोरा ऑफ नासिक डिस्ट्रिक्ट - पी लक्ष्मी नरसिंहन एण्ड बी० डी० शर्मा (पेज 1-644 एवं 8 श्वेत श्याम फोटो + 6 रंगीन फोटो) 1991 : रु० 320/- या $ 64.00

फ्लोरा ऑफ महाबालेश्वर, एण्ड एड्जॅइनिंग, महाराष्ट्र, खंड 1 देशपांडे, शर्मा एंड नायर : (पेज 1-431 एवं 7 रंगीन फोटो + रेखाचित्र) 1993 : रु० 228/- या $ 48.00

खंड 2 (पेज 433-776 और 4 रंगीन फोटो) 1995 : रु० 196/- या $ 40.00

फ्लोरा ऑफ रायगढ़ डिस्ट्रिक्ट, महाराष्ट्र (1-581) रु 372/- या $ 80.00

फ्लोरा ऑफ यवतमल डिस्ट्रिक्ट, महाराष्ट (1-344) रु० 264/- या $ 56.00

फ्लोरा ऑफ आगरा डिस्ट्रीक्ट (1-356) 1995 : रु० 236/- या $ 52.00

विशेष व विविध प्रकाशन : सीरिज 4

आइकोन्स राक्सबर्गिएनी

फेसिकल II * (पेज 1-51) 1968 एण्ड III *(पेज 1-49) 1969 रु० 16/- या $ 4.00 या प्रति फेसिकल; फेसिकल IV * (पेज 1-57) 1970, V * (पेज 1-52) 1971 एण्ड VI (पेज 1-51) 1973 : रु० 20/- या $ 6.00 प्रति फेसिकल;

फेसिकल VII (1-51) 1976 एण्ड VIII (पेज 1-53) 1978 : रु० 32/- या $ 8.00 या प्रति फे सिकल

फाइकोलोजिया इण्डिका - के एस श्रीनिवासन, वाल्युम I * (पेज 1-52) 1969 : रु० 31/- या $ 7.00

वाल्युम ॥ (पेज 1-60) 1973 : रु० 56/- या $ 13.00

भारत की वनस्पति * - हिन्दी प्रकाशन (पेज 1-179) 1984 : रु० 35.00

टाइप कलेक्शन्स इन दी सेन्ट्रल नेशनल हर्बेरियम : यू पी समाद्दार : वॉल्युम ॥ (पेज1-128) 1991 : रु 64/- या $ 22.00

इकोनामिक प्लांट्स ऑफ इण्डिया - एम पी नायर एट आल, वाल्युम I (पेज 1-159) 1989 : रु० 74/- या $ 24.00 खंड ॥ (पेज 161-258) 1994 : रू० 44/- या $ 12.00

नेटवर्क ऑफ बाटनिक गार्डेन्स- सम्पादित एम पी नायर (पेज - 1-272 एवं 166 फोटो) 1987 : रु० 460/- या $ 80.00

रेड डाटा बुक ऑफ इण्डियन प्लाण्ट्स - एडिटेड बाय एम पी नायर एण्ड ए आर के शास्त्री वाल्युम I (पेज 1-383,8 फोटो) 1987 : रु 160/- या $ 48.00

वाल्युम ॥ (पेज 1-273+ 6 फोटो) 1988 : रु 132/- या $ 40.00

वाल्युम ॥। (पेज 1-278+ 4 फोटो) 1989 : रु० 188/- या $ 56.00

फ्लोरा इण्डिके इन्यूरेशियो : मोनोकोटिलिडोनी - एस कीर्तिकेयन, एस के जैन, एम पी नायर एण्ड एम संजप्पा (पेज 1-435 + 3) 1989 रु 160/- या $ 48.00

ए डाइरेक्टरी ऑफ बाटनिकल गार्डेन्स एण्ड पार्क्स इन इंडिया- आर० के० चक्रवर्ती एण्ड डी० पी० मुखोपाध्याय (पेज 1-192, 16 फोटो) 1990 रु० 132/- या $ 40.00.

फ्लोरा ऑफ तरोबा नेशनल पार्क : एस के मलहोत्रा एंड एस० मूर्ति रु 88/- या $ 24.00

सी ग्रासेज ऑफ कोरोमंडल कोस्ट ऑफ इंडिया : के राममूर्ति एट आल : रु 140/- $ 44.00

ब्लैडरवर्ट्स ऑफ इण्डिया : एम के जनार्दनम एंड ए एन हेनरी : रु 72/- $ 24.00

मैनग्रोव्स इन इण्डिया - आइडेंटिपिकेशन मैनुअल, : एल के बनर्जी, ए आर के शास्त्री, एम पी नायर (पेज 1-113 + 30 फोटो) 1989 : 168/- या $ 52.00

ए मैनुअल फॉर हर्बेरियम कलेकशन्स - आर आर राव व बी डी शर्मा (पेज 1-20 + 1) 1990 : रु 8/-

पश्चिमी हिमालय की वनस्पतियाँ (सं० डी के सिंह, बी पी उनियाल) (पेज 1-139) रुं 124/- या $ 36.00

उपरोक्त प्रकाशन निदेशक, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पी-8 ब्रेबोर्न रोड, कलकत्ता -700 001, भारत से खरीद की जा सकती हैं। प्रकाशन वी पी पी से नहीं भेजा जाता है। उचित मूल्य धनादेश द्वारा प्राप्य, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण को अग्रिम भेजते हुए अपना नाम व पता स्पष्ट लिखें। ड्राफ्ट ''एकाउण्ट्स ऑफिसर, पी ए ओ (बी एस आई एण्ड जेड एस आई) कलकत्ता'' के पक्ष में प्रकाशन अधिकारी को उपरोक्त पते पर प्रेषित करें।

एजेडिरेक्टा इण्डिका (नीम)

एजेडिरेक्टा इण्डिका (नीम)

वैण्डा सेरूलिया (ब्लू वैण्डा)

काप्टिस टीटा (मीश्मी टीटा)

निदेशक, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पी – 8, ब्रेबोर्न रोड, कलकत्ता – 700 001 द्वारा प्रकाशित एवं लेसर कम्पयुटर, 31, स्टीफेन हाऊस, 4, बी० बी० डी० बाग, कलकत्ता – 700 001,फ़ोन – 2420455, 2487881 द्वारा मुद्रित।